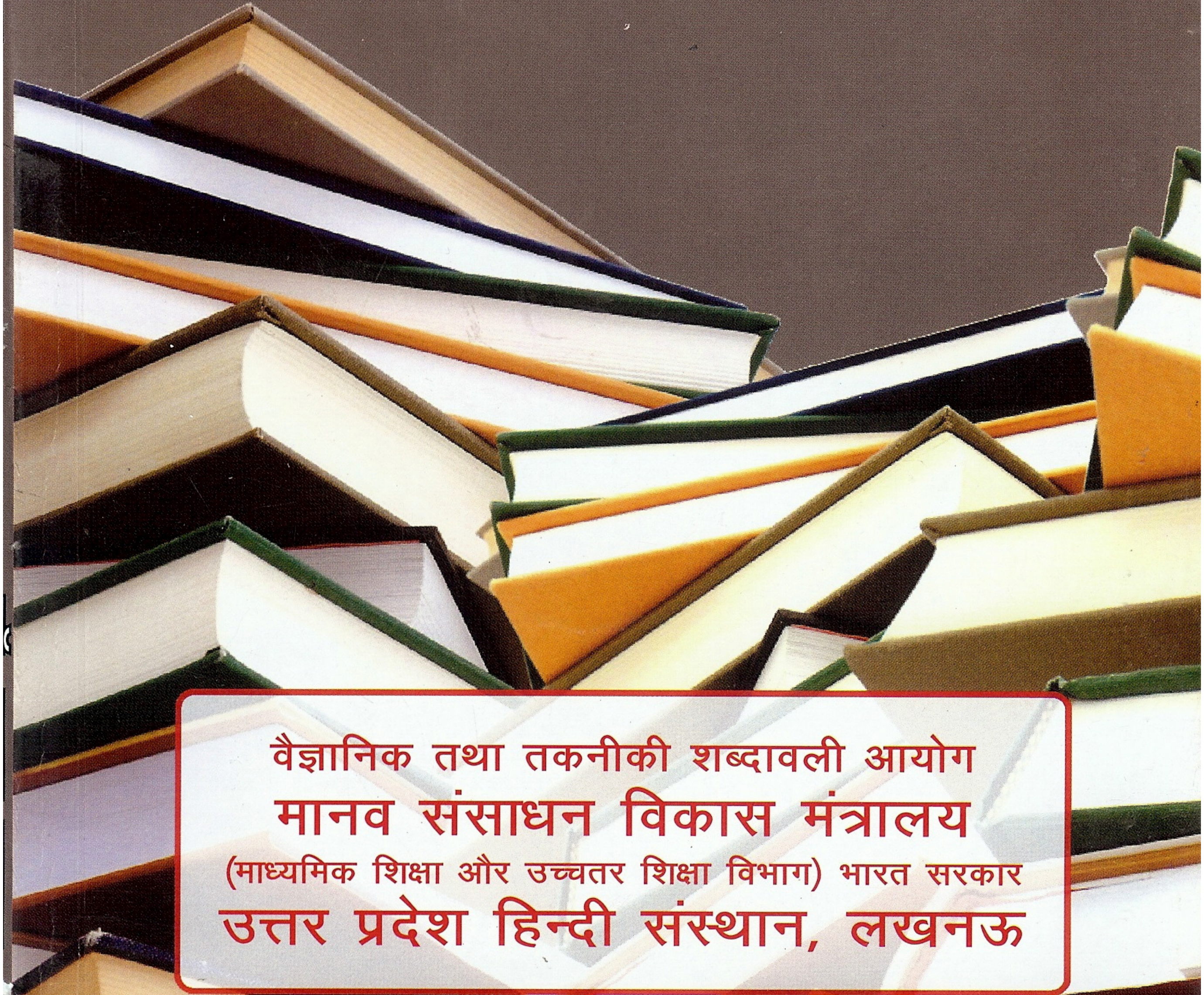
# हिन्दी शिक्षण के अंतरराष्ट्रीय आयाम

## समस्याएँ, चुनौतियां एवं समाधान

सम्पादक
**डॉ. कृष्ण कुमार**



वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग
**मानव संसाधन विकास मंत्रालय**
(माध्यमिक शिक्षा और उच्चतर शिक्षा विभाग) भारत सरकार
**उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान, लखनऊ**

BNP - 1925

8/2/18

44/66

# हिंदी शिक्षण के अंतरराष्ट्रीय आयाम

## समस्याएँ, चुनौतियाँ एवं समाधान

सम्पादक

**डॉ. कृष्ण कुमार**

वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग

**मानव संसाधन विकास मंत्रालय**

(माध्यमिक शिक्षा और उच्चतर शिक्षा विभाग) भारत सरकार

**उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान, लखनऊ**

ग्रन्थांक – 329

प्रकाशक
**डॉ0 सुधाकर अदीब**
निदेशक
उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान
लखनऊ

वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग, मानव संसाधन विकास मंत्रालय (माध्यमिक शिक्षा और उच्चतर शिक्षा विभाग) भारत सरकार की विश्वविद्यालय स्तरीय ग्रन्थ निर्माण योजना के अन्तर्गत हिन्दी ग्रन्थ अकादमी प्रभाग, उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान द्वारा प्रकाशित।



ISBN - 978-93-82175-53-7

प्रथम संस्करण – 2015

प्रतियाँ – 500

मूल्य – रु. 125=00

मुद्रक
**प्रकाश पैकेजर्स**
गोलागंज,
लखनऊ

# प्रकाशकीय

भारतीयता के विकास में हिन्दी की भूमिका निर्विवाद है और जिस तरह से देश-दुनिया की अन्य भाषाओं के साथ पारस्परिक आदान-प्रदान, प्रोत्साहन और सहयोग को भरपूर प्रोत्साहन के बीच अपनी लोकप्रियता को भी, उसने नई ऊँचाइयाँ दी है, उस पर गौरवान्वित होना स्वाभाविक ही है। अन्य भाषाओं के प्रति इस आदरभाव के चलते ही अतीत से वर्तमान तक हिन्दी का क्षेत्र विस्तार अनवरत जारी है। अब यह क्रम अन्तरराष्ट्रीय ऊँचाइयाँ छू रहा है और विश्व के अनेक देशों में हिन्दी भाषा-भाषी लोगों की मौजूदगी लगातार बढ़ रही है। विभिन्न भाषाओं और समुदायों के साथ पारस्परिक समन्वय की अतुलनीय क्षमता के चलते हिन्दी आज के वैश्विक परिवेश में भी लगातार प्रासंगिक हो रही है।

इसी लोकप्रियता और उपयोगिता का प्रमाण है वरिष्ठ हिन्दी सेवी कृष्ण कुमार का यह नवीनतम संग्रह 'हिन्दी शिक्षण के अन्तरराष्ट्रीय आयाम : समस्याएं, चुनौतियाँ एवं समाधान'। इसमें विद्वान लेखकों ने उन समस्याओं और चुनौतियों की चर्चा की है, जो विदेशों में हिन्दी शिक्षण के दौरान सामने आती रही हैं। अंतरराष्ट्रीय सेमीनारों, विश्व हिन्दी सम्मेलनों और प्रवासी साहित्य आदि में भी यद्यपि इनकी चर्चा प्रायः होती रही है, पर इस पुस्तक को यह श्रेय जाता है कि इसने इन्हें अत्यंत व्यवस्थित ढंग से सँयोजा है। ये समस्याएँ और चुनौतियाँ इस लिए भी जागरूक हिन्दी सेवियों की चिंता के विषय हैं। क्योंकि दुनिया का हर आठवाँ व्यक्ति आज केवल हिन्दी बोल रहा है बल्कि उसमें नये से नये शब्द, विचार और अभिव्यक्तियाँ भी सामने आ रही हैं।

स्पष्ट है कि जनसामान्य जिस भाषा में अपने विचारों को अभिव्यक्ति दे रहा है, उसकी स्तरीयता का सवाल मात्र औपचारिक नहीं है। पुस्तक की उपयोगिता इस तथ्य में भी निहित है कि यह केवल सम्बन्धित समस्याओं की चर्चा ही नहीं करती बल्कि उनका समाधान भी प्रस्तुत करती है। पुस्तक में 11 आलेख संग्रहीत हैं। विभिन्न लेखकों के ये आलेख जहाँ अन्तरराष्ट्रीय स्तर पर हिन्दी शिक्षण के स्वरूप की विस्तृत व्याख्या करते हैं, वहीं वर्तमान और भविष्य की आवश्यकताओं

के अनुरूप अध्यापन के लिए जरूरी पहलुओं पर भी गम्भीर विमर्श करते हैं। इतना ही नहीं, पुस्तक के कई लेख व्याकरण सम्बन्धी समस्याओं और विकास के लिए जरूरी नई कार्यशैली से सम्बन्धित सवालों पर भी विचारोत्तेजक सामग्री से भरपूर हैं। निश्चय ही इसकी उपयोगिता असाधारण है और इसके प्रणयन के लिए उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान, वरिष्ठ हिन्दी सेवी और सम्पादक कृष्ण कुमार के प्रति कृतज्ञता ज्ञापित करता है। संस्थान, हिन्दी ग्रन्थ अकादमी प्रभाग की प्रकाशन योजना के अन्तर्गत इसका प्रकाशन कर गौरवान्वित है। आशा है कि समाज के सभी जागरूक वर्गों के बीच हिन्दी के प्रचार-प्रसार को समर्पित यह पुस्तक पर्याप्त लोकप्रिय होगी।

**डॉ0 सुधाकर अदीब**
निदेशक

# निवेदन

आदिमानव से लेकर आधुनिक सभ्य मानव तक की सैकड़ों साल की यात्रा में जिन माध्यमों ने मनुष्य के विकास में सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है, भाषा उनमें सर्वप्रमुख है। भाषा के माध्यम से व्यक्ति ने अपने विचारों को अभिव्यक्ति देना सीखा और आज भी उसके व्यक्तित्व विकास में भाषाओं की भूमिका निरंतर महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही है। जहाँ तक राजभाषा हिन्दी का सन्दर्भ है, अब वह न केवल देश के अन्य भाषा-भाषी राज्यों में भी पढ़ी और बोली जाती है अपितु दुनिया के अनेक देशों में भी उसका पठन-पाठन नई ऊँचाइयाँ ग्रहण कर रहा है। अपनी अभिव्यक्ति क्षमता और वैज्ञानिक विकास के चलते हिन्दी भाषी लोग आज दुनिया के किसी भी कोने में मिल सकते हैं। इस तरह, वे न केवल अपने विचारों का आदान-प्रदान कर रहे हैं बल्कि भारतीय साहित्य और संस्कृति की ऊँचाइयों को भी आत्मसात कर रहे हैं।

विदेशों में हिन्दी शिक्षण का काम किसी चुनौती से कम नहीं है, इसके बाद भी जो विद्वान इस आवश्यकता के प्रति निरंतर जागरूक हैं और हिन्दी के प्रचार-प्रसार के लिए समर्पित हैं, उनमें श्री कृष्ण कुमार का नाम सुपरिचित है। वह विभिन्न स्तरों पर विदेशों में हिन्दी को लोकप्रिय बनाने और उसे स्तरीयता देने से सम्बन्धित विभिन्न प्रयास समय-समय पर करते रहे हैं। इनमें पुस्तक लेखन से लेकर सम्बन्धित आयोजनों आदि की सराहनीय भूमिका रही है। इस क्रम में उनकी यह नवीनतम पुस्तक 'हिन्दी शिक्षण के अन्तरराष्ट्रीय आयाम : समस्याएँ, चुनौतियाँ एवं समाधान' एक बहूपयोगी प्रयास है। इसमें उन्होंने विभिन्न विद्वानों द्वारा समय-समय पर लिखे गये ऐसे आलेखों का संकलन किया है, उन्हें सम्पादित रूप दिया है, जिनमें अन्तरराष्ट्रीय स्तर पर हिन्दी शिक्षण में आने वाली समस्याओं व चुनौतियों की न केवल चर्चा है बल्कि उनके समाधान भी प्रस्तुत किये गये हैं। स्वाभाविक है कि इससे विदेशों में हिन्दी शिक्षण के महत्वपूर्ण कार्य को और अधिक उपयोगी बनाने में सार्थक सहायता मिल सकेगी।

आज खुली अर्थव्यवस्था के बीच दुनिया वास्तविक अर्थों में एक परिवार के

रूप में बदल रही है और ऐसे में दुनिया की गिनी-चुनी सर्वाधिक बोली जाने वाली भाषाओं में एक हिन्दी की भूमिका भी अत्यंत महत्वपूर्ण है। केवल साहित्य और घर-परिवार की भाषा के रूप में ही नहीं, व्यवसाय तथा जीवन के अन्य क्षेत्रों के विकास में भी हिन्दी ने अपनी उपयोगिता लगातार प्रमाणित की है और उसकी यह यशस्वी पहचान निरंतर प्रगति की ओर बढ़ रही है। इस क्रम में 'हिन्दी शिक्षण के अन्तरराष्ट्रीय आयाम : समस्याएँ, चुनौतियाँ एवं समाधान' पुस्तक अत्यंत उपयोगी और सारगर्भित है। आशा है कि जागरूक पाठकों और शोध छात्रों के बीच अन्तरराष्ट्रीय स्तर पर हिन्दी सेवा के लिए समर्पित विद्वान कृष्ण कुमार की यह पुस्तक सराही जायेगी, उनकी आत्मीयता पायेगी।

**उदय प्रताप सिंह**
कार्यकारी अध्यक्ष

# सम्पादकीय

हिंदी का फ़लक उत्तरोत्तर अपनी सीमाओं का विकास कर रहा है तथा यह विश्व में एक बड़े समूह की भाषा के रूप में उभर रही है। डॉ.जयन्ती प्रसाद नौटियाल के तीस वर्षों के अथक शोध से यह निष्कर्ष निकला है कि हिंदी, विश्व में बोली जाने वाली भाषाओं में नम्बर एक के स्थान पर है। यह 63 राष्ट्रों में किसी न किसी रूप में प्रयुक्त है तथा विश्व में इसको समझने वालों की संख्या 1.022 बिलियन है जबकि मैंडरिन की संख्या 0.93 बिलियन ही है। जनसंख्या के आधार पर यह सोचा जाता रहा है कि चीन की मैंडरिन नम्बर एक के स्थान पर है। अंग्रेजी जो कि विश्व की लिंग्वाफ्रैंका बन नम्बर तीन के स्थान पर है।

संतोषजनक बात तो यह है कि आठवें विश्व हिंदी सम्मेलन के उद्घाटन सत्र में संयुक्त राष्ट्रसंघ के महासचिव विंगका मून ने संघ के मुख्य सदन में हिंदी में सबका स्वागत किया था। हिंदी की सम्भावनाएँ निरंतर बढ़ती जा रही हैं और यह अब शीघ्र ही संयुक्त राष्ट्रसंघ की मनोनीत भाषाओं में भी स्थान पाएगी, ऐसी आशा हम कर रहे हैं। भारत की सुधरती आर्थिक स्थिति के कारण भी विश्व व्यापारियों की नजर भारत पर है और इस कारण भी हिंदी का फ़लक बढ़ रहा है। व्यावसायिक हिंदी की सम्भावनाएँ बढ़ रही हैं।

हिंदी के बदलते भविष्य एवं सामयिक आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए भारत सरकार की सहायता से 24-26 जून 2011 में बर्मिंघम में, गीतांजलि बहुभाषीय साहित्यिक समुदाय द्वारा यू.के. एवं यूरोप की अन्य संस्थाओं के सहयोग से एक त्रिदिवसीय संगोष्ठी का आयोजन किया गया था। इस सम्मेलन में भारत एवं यू.के, स्पेन, डेनमार्क, मास्को, इजराइल और हालैंड के विद्वानों के अतिरिक्त प्रकाशकों, पत्रकारों, सम्पादकों एवं मीडिया कर्मियों ने भी भाग लिया था। कार्यक्रम की सफलता के लिए इस महायज्ञ में भारतीय दूतावास में हिंदी-संस्कृति अधिकारी श्री आनन्द कुमार के अथक प्रयास की भावभीनी आहुति भी पड़ी। इस महायज्ञ में कई महापुरुषों के योगदान सराहनीय रहे हैं जिनमें उल्लेखनीय हैं श्री महेन्द्र वर्मा, श्री ऐश्वर्ज कुमार, श्री हर मोहिन्दर सिंह 'उपासक' एवं श्री कृष्ण बिहारी लाल सक्सेना। इन सबने मिल कर हिंदी को आगे बढ़ाने में सहयोग दिया। इन सबके मध्य भ्रष्टाचार जैसे कैंसर

के महासागर में देश आकंठ डूबा हुआ है, किंतु भारतीयों को निराश होने की कोई आवश्कता नहीं है। हमको अपने मनोबल और आत्मविश्वास को संजोकर रखना है क्योंकि यही वह अस्त्र है जिससे सभी समस्याओं-आपदाओं का समाधान हुआ है। जरा सोचिए कि यदि अठारहवीं शताब्दी से अरबों की धनराशि देश से काले धन के रूप में बाहर न गई होती, राबर्ट क्लाइव अपने व्यक्तिगत हित के लिए भारत से US$1,170,000 की धनराशि उठा कर न ले गया होता और US$140,000 प्रतिवर्ष अफीम की तस्करी के रूप में ले गया होता तो भारत की क्या स्थिति होती (विलडुरैंट, द केस फॉर इंडिया, पृष्ठ 7)। इन सबके बावजूद भारत की प्रगति, आज के समय में, 8-10 प्रतिशत प्रतिवर्ष हो रही है। यह सब भारतीयों एवं भारत की शक्ति का परिचायक है। किंतु इक्कीसवीं सदी में, स्वतंत्र भारत के लिए राष्ट्रभाषा का न होना, निश्चय ही चिंता का कारण बन गया है और इसके कारण भारत की अखंडता-एकता को खतरा है। यह है सम्पूर्ण भारत के लिए एक सम्पर्क भाषा का न होना जिसके माध्यम से देश अपने विचारों को व्यक्त कर सके। राष्ट्र को एक जुट हो कर इस पर विचार करना चाहिए। यह विषय भ्रष्टाचार से भी अधिक चिंताजनक है क्योंकि इसके कारण भारत की अस्मिता को खतरा है और सबकुछ मिट जाने का भय भी है। यही विचार श्री अरविंदो जी ने 14 अगस्त 1947 को राष्ट्र के सामने रखे थे। भाषा के स्थायी विकास एवं चिरकालीन प्रभाव के लिए आवश्यक है कि इसके शिक्षण, पठन-पाठन एवं प्रशिक्षण पर बल देते हुए इसे समय एवं परिवेश के अनुकूल बनाए रखा जाय। अधिकतर हिंदी शिक्षण प्रथम या द्वितीय भाषा के रूप में ही होता आया है और पाठ्यक्रमों के निर्माण इसी के अनुकूल होते रहे हैं, किंतु अनेक परिस्थितियाँ ऐसी भी आई हैं जहाँ सीखने वालों के लिए हिंदी तृतीय या चतुर्थ भाषा के रूप में आई है। जैसे यू.के. में बसे पंजाबी या गुजराती बच्चे। अतः समय की आवश्यकता कहती है कि हिंदी पाठ्यक्रमों का निर्माण ऐसा हो जिसमें हिंदी को तृतीय या चतुर्थ भाषा के रूप मे देखा गया हो। यू.के. क्षेत्रीय हिंदी सम्मेलन में हिंदी के विभिन्न पक्षों पर विचार-विमर्श हुआ। 10 आलेख तो हिंदी शिक्षण पर ही केन्द्रित थे। सामयिक प्रकाशन के निदेशक श्री महेश भारद्वाज जी ने प्रस्ताव रखा कि हिंदी शिक्षण से सम्बंधित आलेखों को एक पुस्तक का रूप दिया जाय तो अच्छा रहेगा। यह कार्य महेश जी ने मुझको सौंपा। यह पुस्तक उसी प्रस्ताव का प्रतिफल है। पुस्तक निर्माण की

प्रक्रिया में सर्वप्रथम श्री महेन्द्र वर्मा जी के माध्यम से लेखकों से उनकी स्वीकृति और अनुमति ली गई। हिंदी शिक्षण के अन्तरराष्ट्रीय आयाम में कुल मिलाकर 11 आलेख हैं। पहला आलेख प्रो. श्रीश जैसवाल का है जो आजकल स्पेन में भारतीय सांस्कृतिक सम्बंध परिषद की ओर से विज़िटिंग प्रोफेसर के रूप में हिंदी शिक्षण से जुड़े हैं। उनका आलेख 'विदेशी भाषा के रूप में हिंदी शिक्षणः कुछ आयाम' यह स्थापित करता है कि "विदेशी भाषा के अध्ययन में लक्ष्य-भाषा के रूप में अध्येता को सामाजिक तथा सांस्कृतिक ज्ञान का होना बहुत महत्वपूर्ण है।" तथा इस दिशा में उचित सामग्री उपलब्ध कराने की आवश्यकता है। श्री महेन्द्र वर्मा ने यू.के. में द्वितीय भाषा के रूप में हिंदी शिक्षण की नींव रखते हुए, उपयुक्त पाठ्यक्रमों का निर्माण किया, करवाया और अब भी सेवा निवृत्त होने के बाद भी हिंदी शिक्षण सेवा में संलग्न होते हुए कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय को अपनी सेवाएँ अर्पित कर रहे हैं। "ब्रिटेन में हिंदी अध ययन-अध्यापन के कुछ पहलू" में उन्होंने अपने 40-45 वर्षों के शिक्षण-प्रशिक्षण के विभिन्न अनुभवों के आधार पर कुछ मौलिक विचार प्रस्तुत किये हैं। डेनमार्क में भारतीय प्रवासी अर्चना पैन्यूली ने, जो एक जानी-मानी कथाकार हैं, अपने आलेख "हिंदी शिक्षण की समस्याएँ और हिंदी अध्यापकों की योजना, समस्या व समाधान" में डेनमार्क में हिंदी शिक्षण- प्रशिक्षण की समस्याओं और उनके कारणों पर एक सूक्ष्म दृष्टि डालती हुई विश्व हिंदी समाज से बड़ी ही सारगर्भित अपील करती हैं। लुदमीला खोखलोवा, बोरिस जाखारिन तथा येकातेरीना पानिमा के आलेख, "मास्को विश्वविद्यालय में हिंदी पढ़ाने का अनुभव" और "हिंदी के अध्ययन की विधियाँ-शब्दावली और शब्दरचना", मास्को में हिंदी शिक्षण के दृश्य चित्रित करते हुए सामयिक आवश्यकताओं की ओर सबका ध्यान खींचते हैं। ब्रिटेन निवासी हिंदी शिक्षक डॉ. वंदना मुकेश "हिंदी शिक्षण-प्रशिक्षण में समस्याएँ, चुनौतियाँ एवं समाधान" के माध्यम से पूरा चित्र खींचते हुए समस्याओं और उनके समाधान की ओर संकेत करती हैं।

भारत के अनुभवी शिक्षक डॉ. श्रीराम परिहार का आलेख "हिंदी शिक्षण एवं प्रशिक्षण में समस्याएँ, चुनौतियाँ एवं समाधान" भी वह सब प्रस्तुत करता है जिसकी जानकारी सबको होनी चाहिए। इजराइल से पधारे डॉ. गेनादी श्लोम्पर का आलेख "ब्रू भाषा-भाषी छात्रों को हिंदी पढ़ाने की समस्याएँ और उनका समाधान" में व्यावहारिक दिक्कतों का उल्लेख करते हुए यह बताया है कि उच्चारण सम्बंधी

समस्याओं के समाधान, इजराइल में हिंदी भाषी लोगों की कमी के कारण प्रबल हो रहा है। हिंदी फिल्मों के माध्यम से कुछ सफल-सार्थक प्रयोग अमेरिका एवं मास्को में किए गए हैं, हो सकता है इजराइल में भी इसकी कुछ उपयोगिता हो। चित्र कुमार एवं ऐश्वर्ज कुमार का आलेख "दूसरी भाषा के रूप में हिंदी" में दिखाया है कि किस प्रकार कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय का हिंदी पाठ्यक्रम विश्व के विभिन्न देशों में सफल हो रहा है। स्कूल ऑफ ओरियंटल ऐंड अफ्रीकन स्टडीज़ की फ्रेंचिस्का ओरिसिनी का आलेख "उच्च्व हिंदी शिक्षा में वेब का प्रयोग" अधुनातम प्रौद्योगिकी सूचना तंत्र का प्रयोग कर हिंदी शिक्षण में विस्तार लाने का प्रस्ताव रखते हुए अपने प्रयोग का वर्णन करता है। संकलन का अंतिम आलेख, यद्यपि संगोष्ठी में प्रस्तुत नहीं किया गया था फिर भी उपयोगिता के कारण इसमें सम्मिलित किया जा रहा है और यह है डॉ. कृष्ण कुमार का "अन्तरराष्ट्रीय स्तर पर हिंदी शिक्षण-प्रशिक्षण की आवश्यकताएँ"। संकलन में समाहित आलेखों की विविधता-व्यापकता को ध्यान में रखते हुए कहा जा सकता है कि विश्व हिंदी जगत के लिए हिंदी शिक्षण-प्रशिक्षण को ध्यान में रख कर लिखे गए इन आलेखों का यह निबंध-संग्रह उपयोगी सिद्ध होना चाहिए। इसमें पाठकों को कुछ आलेखों में वर्तनीदोष मिल सकता है। इनको ज्यों का त्यों रख दिया गया है, जो सुधारा जा सकता था, ताकि पाठकों को विश्वहिंदी की विविधता का अंदाजा भी लग जाय। मैं पुनः यौर्क के श्री महेन्द्र वर्मा एवं कैम्ब्रिज के श्री ऐश्वर्ज कुमार के योगदानों को रेखांकित करते हुए उनके प्रति अपना आभार प्रकट करता हूँ । साथ में उन सभी साथियों के प्रति अपनी कृतज्ञता ज्ञापित करना चाहता हूँ जिनके आलेखों को इस सग्रंह में रखा गया है। भारत सरकार का भी मैं आभारी हूँ जिसने इस सम्मेलन हेतु आर्थिक सहायता प्रदान कर इसको सम्भव बनाया था। अंतिम निर्णय तो विश्व हिंदी जगत ही देगा कि हमारा यह प्रयास कहॉं तक सफल रहा। अस्तु।

**डॉ. कृष्ण कुमार**

अध्यक्ष एवं संस्थापक

गीतांजलि बहुभाषीय साहित्यिक समुदाय, बर्मिंघम

बी 29 6क्यू जी

यू.के

# समर्पण

यह निबंध संग्रह स्वर्गीय वामनराव पेठे, पंडित भास्कर विष्णु फड़के सहित अन्य सभी चिंतको को समर्पित है, जिन्होंने आधुनिक भारत में देशत्व भावना को जाग्रत किया। साथ में यह संकलन पत्नी चित्रा कुमार, पुत्र डॉ. प्रारब्ध कुमार एवं पुत्रवधू नैथली ब्यूर्ग को भी समर्पित है, जिन्होंने मेरे मन-मानस में प्राण का संचार किया।

# अनुक्रम

# विदेशी भाषा के रूप में हिन्दी शिक्षण

— श्रीश चंद्र जैसवाल

भाषा, संस्कृति का सर्वाधिक शक्तिशाली और समृद्ध उपकरण है, क्योंकि वह संगति और सम्बन्ध के बोध की वाहिका है। वह एक ओर सामाजिक संस्था के निर्वाह का सर्वाधिक महत्वपूर्ण उपकरण है तो दूसरी ओर व्यक्तित्व-निर्माण का सार्थक साधन। एक स्तर पर वह सम्प्रेषण संभावना की प्रतीकबद्ध व्यवस्था है तो दूसरे स्तर पर अभिव्यक्ति की सर्जनात्मक संभावना।

भाषा एक बहुत बड़ी विभाजक शक्ति भी हो सकती है, यह नकारात्मक शक्ति एक संकटग्रस्त अस्मिता के बोध से ही उत्पन्न होती है। अस्मिता का यह बोध मूलरूप से भाषा के साथ ही जुड़ा हुआ है और जीवित भाषा की उपज है। 'कोई किसी भाषा का है' इसके निर्णय से पहले यह आवश्यक है कि वह भाषा 'उसकी' हो। भाषा 'उसकी' हो, यह ममत्व जन्म से या व्याकरण के अध्ययन मात्र से नहीं आता वरन् भाषा के उपयोग से, जीवंत भाषा से आता है। भाषा का उपयोग जितना ही व्यापक और गहरा होता है भाषा उतनी ही समृद्धतर होती है और अपने व्यवहर्ता को समृद्धतर बनाती है। भाषा-व्यवहार समृद्धि देने वाला तभी होता है जब उसके साथ लंगाव/प्रतिबद्धता हो। ऐसी ही भाषा, संस्कृति का और अस्मिता का उपकरण बनती है और यही मातृभाषा का भी सन्दर्भ बनती है।

पिछली शताब्दी तक बहुभाषी होना, व्यक्ति की सांस्कृतिक सम्पन्नता का द्योतक था। द्वितीय भाषा के रूप में भाषा का अध्ययन-अध्यापन एक सीमित वर्ग के कुछ व्यक्तियों तक ही संकुचित था, पर आज की स्थिति सर्वथा भिन्न है। द्वितीय भाषा के रूप में भाषा की जानकारी, आज सांस्कृतिक सम्पन्नता का द्योतक मात्र नहीं रह गई है, वरन् वह एक व्यावहारिक आवश्यकता बन गई है।

भाषा-शिक्षक का क्षेत्र अनुप्रयोगात्मक होता है। वह अनिवार्यतः उद्देश्य या प्रयोजन की सिद्धि है, जो प्रयोक्ता-सापेक्ष होती है। भाषा के प्रयोक्ता की विभिन्न आवश्यकताओं की पूर्ति के साधन के रूप में भाषा-शिक्षण की सिद्धि को ऐसी रेखा

में देखा जा सकता है, जिसके एक छोर पर विदेशी प्रयोक्ता वर्ग है और दूसरे छोर पर मातृभाषी प्रयोक्तावर्ग।

हिंदी भाषा शिक्षण के सन्दर्भ में यह कहा जा सकता है कि उसके एक छोर पर ऐसे व्यक्तियों का समुदाय है जो न हिंदी भाषा जानता है और न जिसे सामाजिक या वैयक्तिक आवश्यकताओं के लिए हिंदी भाषा जानना जरूरी ही है (विदेशी परिवेश) और उसके दूसरे छोर पर ऐसा समुदाय है, जो न केवल हिंदी भाषाा का कामचलाऊ ज्ञान रखता है वरन् उसके मानकरूप के प्रयोग की भी दक्षता रखता है। मातृभाषा एक संस्थागत यथार्थ है। वह व्यक्ति के आत्मीय व्यवहार क्षेत्रों को भाषायी समाज के वृहत्तर सामाजिक सन्दर्भों से जोड़ने वाली संकल्पना है, जो व्यक्ति की सामाजिक अस्मिता को निर्धारित करती है।

द्वितीय भाषा मातृभाषा के साथ ही वह सहयोजित भाषा होती है, जिसे भाषायी समुदाय का एक सदस्य होने के नाते प्रयोक्ता सीखता है, वह भाषायी समुदाय के भाषायी कोश (वर्बल रिपर्त्वा) की एक भाषा होती है। इसके विपरीत प्रयोक्ता विदेशी भाषा न तो अनिवार्यतः सीखता है और न ही वह उसके भाषायी क्षेत्र में द्वितीय भाषा के रूप में देखा जा सकता है। पर इनमें एक प्रमुख अंतर है वह विजातीय भाषा है, जिसमें विदेशी भाषा के सामाजिक सन्दर्भ और सांस्कृतिक मूल्य भी समाविष्ट मिलते हैं, जिनके व्यावहारिक प्रयोग के नियम दूसरे समाज की व्यवस्था को प्रतिबिंबित करते हैं। इसकी तुलना में 'हिंदी भाषा अन्य भारतीयों के लिए एक स्वजातीय भाषा है, जिसका भाषायी समाज ऐतिहासिक दृष्टि से व्यापक स्तर पर घटनाओं के एक ही दौर से गुज़रा है, जो सामाजिक संस्थाओं की बनावट और मूल्यों के सन्दर्भ में बहुत कुछ समान है।

विदेशों में हिंदी और विदेशी भाषा के रूप में हिंदी, ये दो भिन्न-भिन्न संकल्पनाएँ हैं। एक का सम्बन्ध हिंदी के समाजशास्त्र पक्ष से है और दूसरे का सम्बन्ध हिंदी के शैक्षिक पक्ष से है। हिंदी का समाजशास्त्रीय पक्ष यह संकेत देता है कि राष्ट्रीय सन्दर्भ से इतर उसका एक अंतरराष्ट्रीय सन्दर्भ भी है। हिंदी बड़े पैमाने पर फ़ीजी, ट्रिनिदाद, गुयाना, मारीशस, सूरीनाम, नेपाल, भूटान, आदि देशों में प्रयोजनमूलक भाषा के रूप में प्रयुक्त हो रही है। वर्मा, श्रीलंका, कम्पूचिया में हिंदी सामाजिक और सांस्कृतिक अन्तःशक्ति के रूप में विद्यमान है तथा पूर्व

सोवियत संघ, अमेरिका यूरोप तथा एशिया के अनेक देशों में हिंदी के प्रति गहरी शैक्षिक अभिरुचि है। अंतरराष्ट्रीय स्तर पर हिंदी लगभग 160 विश्वविद्यालयों में पढ़ाई जा रही है। हिंदी में अंतरराष्ट्रीय भाषा के लिए आवश्यक सामर्थ्य है। इस क्षमता की पहचान आज के परिप्रेक्ष्य में बहुत आवश्यक है।

भाषा शिक्षण के प्रणाली तंत्र का सम्बन्ध उस तंत्र या ढाँचे के साथ होता है जो भाषा वैज्ञानिक सिद्धांत को शैक्षिक सिद्धांत या तंत्र से जोड़ता है। यह वस्तुतः भाषा शिक्षण को व्यवस्थित करने का संक्रियात्मक (Operational) साधन है इसका सम्बन्ध एक तरफ लक्ष्यभाषा (TargetLanguage) के स्वरूप से जुड़ा होता है तो दूसरी तरफ विद्यार्थी की मातृभाषा के साथ तुलना के प्रश्न से संबद्ध होता है।

जहाँ अध्येताओं का वर्ग समभाषी (Homogeneous) होता है, वहाँ व्यतिरेकी भाषा विज्ञान या तुलनात्मक दृष्टि का विनियोग सफलतापूर्वक किया जाता है। इसके विपरीत अध्येताओं का वर्ग यदि विषम (Heterogeneous) होता है तो शिक्षण का उद्देश्य भाषा-शिक्षण ही रहता है। इस प्रकार विदेशी भाषा के रूप में हिंदी की शिक्षण प्रक्रिया एक ओर लक्ष्य भाषा के विशेष प्रयोजनों की भाषा (Language for specil purposes) संकल्पना को जन्म देती है, तो दूसरी ओर उसके प्रभावी शिक्षण के लिए उपयुक्त शिक्षण विधि और प्रणाली पर ध्यान देती है। विदेशी भाषा के रूप में हिंदी शिक्षण की जब भी बात होती है, तब यह प्रश्न उठता है कि लक्ष्यभाषा के रूप में हिंदी के किस मानक रूप को पढ़ाया जाए? इसके लिए हमें जीवंत मानक हिंदी के स्वरूप, हिंदी भाषा की आधारभूत संरचना, हिन्दी की सामाजिक शैलियों, विशेष प्रयुक्ति क्षेत्र (मौखिक, लिखित, औपचारिक, अनौपचारिक, बोलचाल साहित्य, पत्रकारिता और विज्ञान) में हिन्दी की प्रवृत्तियों पर ध्यान केंद्रित करना होगा।

विदेशों में हिंदी की पढ़ाई एक विदेशी भाषा के रूप में विश्वविद्यालय स्तर पर आरम्भ होती है। सीधे साहित्य पढ़ाकर या व्याकरण के नियम रटाकर भाषा नहीं सिखाई जा सकती है। शिशु पहले बोलना सीखता है फिर पढ़ना लिखना। उसी प्रकार हिंदी के वाचिक रूप को महत्व देते हुए सम्प्रेषणपरक दृष्टि से शिक्षण पर ध्यान देना चाहिए। यह आवश्यक है कि लिखने, बोलने पढ़ने के सन्दर्भ में

जीवन के वास्तविक प्रसंगों में अध्येता, भाषा के माध्यम से अपने विचार व्यक्त कर सके। ये कौशल, जो कि वास्तव में सम्प्रेषण के सन्दर्भ हैं, भाषिक इकाइयों के अर्जन से ही प्राप्त होते हैं। कौशलों का विकासक्रम कुछ इस प्रकार होता है- प्रमुख कारक-सार्थक श्रवण, उसके उपरान्त ध्वनि, शब्दोच्चारण, वाक्योच्चारण नियंत्रित अभ्यास द्वारा छोटे वाक्यों की संरचना और स्वतन्त्र अभिव्यक्ति का विकास; फिर संवाद-वर्णन-विवरण-कथन और व्याख्यान।

ध्वनि के वर्ण-प्रतीकों से स्थानापत्ति फिर विभिन्न लेखों का वाचन। वर्ण-वर्तनी नियंत्रण के उपरान्त नियंत्रित अभ्यास द्वारा छोटे वाक्यों का लेखन तदनंतर स्वतन्त्र लेखन से तार्किक अभिव्यक्ति का विकास-पत्र-दैनिकी, संवाद, वर्णन, कहानी, निबंध आदि की रचना। कौशल शिक्षण में पूरी भाषा को उसके भाषायी तत्वों, वस्तु सन्दर्भ आदि की सम्पूर्ण व्यवस्था मानकर आयोजित करना चाहिए, न कि अलग-अलग स्वायत्त इकाइयाँ मानकर।

विदेशी भाषाशिक्षण में विषय वर्ग समूह में प्रत्यक्ष विधि अधिक उपयोगी है। इस शिक्षण विधि में शिक्षार्थी की मातृभाषा अथवा आरोपित संपर्क भाषा को बिना मध्यस्थ बनाए, सीधे हिंदी भाषा सिखाई जा सकती है। प्रत्यक्ष विधि के अंतर्गत प्रदर्शन द्वारा कुछ शब्द बताये जाएँ। 'यह' और वह' आदि के भेद स्पष्ट किये जाएँ। अध्यापक छात्रों के स्तर को ध्यान में रखकर प्रथमतः हिंदी की अस्तित्वबोधक क्रिया से भाषा के सीधे संपर्क में आकर शिक्षार्थी मौखिक अभ्यास के सहारे भाषा सीखता है। देर तक वाक्यों को सुनना फिर उनका इस तरह अभ्यास करना कि वे वाक्य आदत के रूप में ढल जाएँ, इस विधि की मुख्य शिक्षण प्रक्रिया है। इस विधि में न तो व्याकरण के नियमों को कंठस्थ करने पर बल दिया जाता है और न अनुवाद प्रक्रिया को ही उसके लिए आधार बनाया जाता है। प्रत्यक्ष विधि के अतिरिक्त स्वाभाविक विधि, मनोवैज्ञानिक विधि, ध्वनि वैज्ञानिक विधि, भाषा नियंत्रण विधि, अनुकरणात्मक विधि, अभ्यास सिद्धांत विधि आदि का उपयोग भी परिलक्षित होता है।

हिंदी अध्यापन के लिए विविध परिस्थितियों के आधार पर पाठ सामग्री का निर्माण किया जाना चाहिए। इसके लिए भी प्रत्यक्ष विधि एवं भाषावैज्ञानिक पद्धति को आधार बनाना चाहिए। पहले छोटे-छोटे वाक्यों का अभ्यास कराया जाय,

जिससे उनमें सम्प्रेषण शक्ति का विकास हो सके। फिर वाक्यों की पूरी संरचनाओं के अभ्यास के बाद छोटे-छोटे वर्णनात्मक पाठ दिए जा सकते हैं। इसके बाद छात्रों में रचनात्मक कौशल के विकास के लिए छोटी-छोटी कहानियाँ, कविताएँ प्रस्तुत की जा सकती हैं।

व्यतिरेकी विश्लेषण, भाषा शिक्षण के क्षेत्र में अध्येता की कठिनाइयों का पूर्वानुमान लगाने में सहायता करता है। मातृभाषा के प्रभाव से होने वाली कठिनाइयों के बारे में अनुमान लगाकर पाठ्य बिंदुओं का इस प्रकार अनुस्तरण किया जाना चाहिए, जिसमें अध्येता की मातृभाषा एवं लक्ष्यभाषा में समान पाठ्यबिंदु पहले पढ़ाया जाए और असमान बिंदुओं का अभ्यास बाद में करवाया जाए।

ध्वनिसंरचना, रूपरचना शब्दक्र्, परसर्गो का प्रयोग, विश्लेषणों के प्रयोग, विशेषणों के प्रयोग, अर्थसंरचना, वाक्यविन्यास से सम्बन्धित समस्याओं का समवर्ग और विषमवर्ग के आधर पर व्यतिरेकी विश्लेषण, तुलनात्मक विधि का प्रत्यक्ष विधि के द्वारा यथासन्दर्भ समस्याओं का समाधान किया जा सकता है।

इसी क्रम में विदेशी भाषा के रूप में हिंदी शिक्षण की कुछ समस्याओं पर ध्यान अपेक्षित है- हिंदी की ध्वनि व्यवस्था को लिया जाए तो स्वर ध्वनियों के ह्रस्व-दीर्घ के उच्चारण की समस्या विदेशियों के समक्ष आती है। एक ही शब्द में दो-तीन दीर्घ स्वरों का उच्चारण उनके लिए कठिन है। सभी स्वरों में संभव अनुनासिकता अधिकांश विदेशी विद्याथियों के लिए कष्टप्रद हो जाती है। हिंदी के स्वरक्रम तथा 'अ' लोप का भी उच्चारण सहज रूप से नहीं कर पाते हैं। उनके लिए मूर्धन्य ध्वनियों को उच्चारित करना भी मुश्किल होता है। व्याकरण सम्बन्धी व्यवस्था के अंतर्गत लिंग-निर्धारण, अन्विति, अन्वितिहीनता, 'ने' का प्रयोग आदि अन्य कई क्षेत्र ऐसे हैं, जहाँ विदेशी विद्यिार्थियों को अधिक सजग रहना पड़ता है।

आज सभी भाषावैज्ञानिक तथा शिक्षाशास्त्री स्वीकार करते हैं कि विदेशी भाषा अध्ययन में लक्ष्यभाषा के सामाजिक तथा सांस्कृतिक सन्दर्भ का ज्ञान अध्येता के लिए बहुत महत्वपूर्ण है। इसके लिए छात्र की मातृभाषा तथा लक्ष्यभाषा दोनों के

सांस्कृतिक तत्वों की तुलना या उनकी सापेक्षिक विशिष्टताओं का अध्ययन उपयोगी होता है। दो भाषायी समाजों के सभी सांस्कृतिक तत्वों का विश्लेषण, शिक्षार्थी के लिए उपयोगी नहीं होता। यह मूलतः समाजशास्त्र का विषय है। शिक्षक, शिक्षार्थी तथा शिक्षण सामग्री निर्माताओं के लिए वे ही सांस्कृतिक तत्व मूलभूत महत्व के हैं, जो भाषा में प्रतिबिंबित होते हैं। इनमें वे ही तत्व शैक्षणिक दृष्टि से महत्वपूर्ण हैं, जो अध्येता के अपने सांस्कृतिक-सामाजिक परिवेश तथा मूल्यों से भिन्न हों। यह भिन्नता मानवव्यवहार के कई सामाजिक-सन्दर्भों में लक्षित होती है, जैसे अभिवादन तथा संबोधन के रूप, शिष्टाचार की शब्दावली, आदरसूचक सर्वनाम, नाते-रिश्ते के शब्द, सामाजिक तथा पारिवारिक ढाँचा (Pattern), खान-पान, धर्म, रीतिरिवाज, त्योहार, सामाजिक आकांक्षाएँ तथा सामाजिक अभिव्यक्तियाँ आदि। प्रस्तुत आलेख में विदेशी भाषा के रूप में हिन्दी शिक्षण के सन्दर्भ में भाषा शिक्षण तथा व्यतिरेकी/तुलनात्मक दृष्टि से महत्वपूर्ण पक्षों पर चर्चा की गई है। यह विश्लेषण पूर्ण नहीं कहा जा सकता। विदेशी भाषा के रूप में हिन्दी अध्यापन तथा शिक्षण सामग्री निर्माण में अभी तक अधिकांशतः अंग्रेजी भाषा-भाषियों की कठिनाइयों को ही प्रायः ध्यान में रखा गया है। पिछले बीस-पच्चीस वर्षों में जो भी शिक्षण सामग्री प्रकाश में आई है, उसका अन्य विदेशी भाषा-भाषियों के लिए सुचारु रूप से उपयोग नहीं किया जा सका है। अतः आवश्यकता है कि विश्व की अन्य विदेशी भाषाओं के सन्दर्भ में हिन्दी के अनुप्रयुक्त एवं व्यतिरेकी अध्ययन किए जाएँ तथा उनके परिणामों का उपयोग करते हुए सम्बन्धित विदेशी भाषा-भाषियों के सन्दर्भ में हिन्दी शिक्षण पाठ्यक्रमों एवं शिक्षण सामग्री का निर्माण किया जाए, तभी विदेशी भाषा के रूप में हिन्दी शिक्षण को एक व्यवस्थित वैज्ञानिक आधार प्राप्त हो सकेगा।

स्पेनिश, रूसी, चीनी, जर्मन, फ्रांसीसी भाषाओं के अतिरिक्त रोमानियन, बल्गारियन, चैक आदि विश्व की अग्रणी भाषाओं में हिन्दी अध्ययन और अध्यापन के लिए शिक्षण सामग्री उपलब्ध है किन्तु पर्याप्त मात्रा में नहीं है। इन देशों में हिन्दी के प्रति अभिरुचि निरंतर बढ़ रही है, अतः इस क्षेत्र में अधिक प्रयास अपेक्षित है।

विश्व में हिन्दी भाषा और साहित्य शिक्षण के लिए विश्वविद्यालय स्तर के

समान हिन्दी पाठ्यक्रमों के निर्माण की अत्यंत आवश्यकता है। इसे इतना व्यापक और लचीला बनाना होगा जिससे कि इसकी व्यापक रूपरेखा के अन्तर्गत हर विश्वविद्यालय अपना विशिष्ट पाठ्यक्रम बना सके। केन्द्रीय हिन्दी संस्थान अंतरराष्ट्रीय स्तर पर विदेशी भाषा के रूप में हिन्दी शिक्षण के मानकीरण की प्रक्रिया में संलग्न है।

भाषा प्रौद्योगिकी आज एक विकसित विज्ञान के रूप में सर्वसामान्य को उपलब्ध है। इसका पर्याप्त उपयोग अपेक्षित सामग्री निर्माण में आशातीत सफलता प्रदान कर सकता है। दृश्य- श्रव्य सामग्री, फिल्में, टेलीविजन के विभिन्न कार्यक्रम अतिरिक्त शिक्षण सामग्री के रूप में उपयोग में लाये जा सकते हैं। हिन्दी शिक्षण में संलग्न सभी संस्थाओं के सम्मिलित प्रयासों से इस क्षेत्र में आने वाली समस्याओं का समाधान अवश्य हो सकेगा।

# ब्रिटेन में हिन्दी अध्ययन–अध्यापन के कुछ पहलू

– महेन्द्र वर्मा

भाषा शिक्षण में कई महत्वपूर्ण बातों को ध्यान में रखना पड़ता है। भाषा नियोजन में जिनका योगदान है वे हैं - शिक्षार्थी, उनकी मातृभाषा/विरासतीय भाषा, विदेशी भाषा के प्रति अभिवृत्ति एवं अभिप्रेरणा, उनका भाषा-परिदृश्य एवं उनकी भाषा प्रवीणता, शिक्षक एवं उनका प्रशिक्षण, भाषा-संदर्भ, पाठ्य पुस्तकें, भाषा परीक्षण, शिक्षानीति एवं प्राथमिक, माध्यमिक तथा उच्च शिक्षा में स्थान, घर का भाषिक माहौल, अभिभावकों का भाषा नियोजन, उनकी भाषानीति एवं उसका वचनबद्धता के साथ कार्यान्वयन। इन शैक्षिक सिद्धान्तों को ध्यान में रखते हुए ब्रिटेन के सन्दर्भ में हिन्दी अध्ययन-अध्यापन के कुछ पहलुओं पर विचार करूँगा।

## ब्रिटेन में हिन्दी शिक्षण की पृष्ठभूमि :

ब्रिटेन में हिन्दी शिक्षण का इतिहास काफी पुराना है। सरकारी अफसरों एवं सैनिकों की औपनिवेशिक आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर विश्वविद्यालयों में पाठ्यक्रम बनाया गया था। ये लोग ब्रिटेन और भारत में हिन्दी-उर्दू का अध्ययन करते थे। स्वाभाविक है कि यह पाठ्यक्रम वयस्कों के लिए ही था। ब्रिटिश साम्राज्य के अन्त होने के बाद काफी संख्या में भारत, पाकिस्तान, बांग्लादेश के नागरिक परिवार के साथ ब्रिटेन आने लगे। पिछले पाँच-छह दशकों में अप्रवासियों की संख्या बढ़ती चली गयी। वे अभी अच्छी तरह बसे भी नहीं थे कि बड़े-बूढ़े महसूस करने लगे कि उनके और पोते-पोतियों के बीच वार्तालाप की भाषा लुप्त होने लगी है। सरकारी विद्यालयों में अल्पसंख्यक दक्षिण भारतीय भाषाओं के अध्यापन की कोई सुविधा नहीं थी। मातृभाषा/विरासत की भाषा के संभावित विस्थापन से माता-पिता, दादा-दादी की चिन्ता जब बढ़ने लगी तब उन्होंने मंदिरों, सामुदायिक केन्द्रों, विद्यालयों, घरों में स्वैच्छिक विद्यालयों की स्थापना शुरू कर दी। वर्षों बाद जब राष्ट्रीय पाठ्यक्रम बना तब कुछ स्कूलों में हिन्दी की भी पढ़ाई, आधुनिक विदेशी भाषा के रूप में शुरु हो गई। 1988 से 1994 तक 'जी.सी.एस.ई.' की

हिन्दी में परीक्षा चलती रही। दुर्भाग्यवश परीक्षा बोर्ड ने परीक्षार्थियों की कम संख्या होने का कारण बता कर 'जी.सी.एस.ई.' और 'ए स्तर' की परीक्षाओं को बन्द कर दिया। स्कूलों में हिन्दी की पढ़ाई बन्द तो हो गई, पर इन सब के बावजूद भी निष्ठावान शिक्षकों और कुछ माता-पिता की प्रतिबद्धता के बल पर स्वैच्छिक कक्षाओं में हिन्दी की पढ़ाई अनेक शहरों में चल रही है। ये कक्षाएँ प्रायः शनिवार/रविवार को लगती रही हैं। हिन्दी शिक्षण का इतिहास भी है तो यही है, पर और भाषाओं के बनिस्बत हिन्दी के शिक्षार्थी विभिन्न मातृभाषा परिवार के होते हैं। शिक्षण, प्रशिक्षण, पाठ्यपुस्तक – इन सब के लिए इस बात को ध्यान में रखना बहुत जरूरी है।

इस प्रतिकूल वातावरण में शिक्षकों और शिक्षार्थियों के लिए एक अच्छी बात यह हुई कि 'भाषा सीढ़ी' नामक एक नई परियोजना 'स्वैच्छिक राष्ट्रीय मान्यता योजना' के अन्तर्गत प्रारम्भ की गई है। यदि किसी प्राथमिक स्कूल में हिन्दी पढ़ने वाले बच्चे पर्याप्त संख्या में हों तो हिन्दी की पढ़ाई शुरू की जा सकती है। पर ऐसे स्कूल यहाँ हैं कहाँ? अब अगले परिच्छेद में हिन्दी पढ़ने वालों की भाषिक स्थिति और हिन्दी शिक्षण की समस्याओं पर विचार किया जाएगा।

हिन्दी शिक्षार्थी समुदाय का वर्गीकरण इस प्रकार किया जा सकता है –

1. मातृभाषा हिन्दी-भाषी परिवार के भारत में जन्मे और पढ़े-लिखे हिन्दी भाषी बच्चे। वे देवनागरी में साक्षर होते हैं।

2. मातृभाषा हिन्दी-भाषी परिवार के ब्रिटेन में जन्मे हिन्दी-भाषी बच्चे। केवल रोमन लिपि में साक्षर।

3. मातृभाषा हिन्दी परिवार के ब्रिटेन में जन्मे अहिन्दी भाषी बच्चे (अंग्रेजी भाषी)। केवल रोमन लिपि में साक्षर।

4. द्वितीय, तृतीय भाषा के रूप में अन्य भारतीय भाषा-भाषी बच्चे (जैसे पंजाबी, गुजराती, तमिल, तेलुगु, मराठी परिवारों के बच्चे)। केवल रोमन लिपि में साक्षर।

5. तृतीय या चतुर्थ भाषा के रूप में मारिशस, फिजी या कैरेबियन के भारतीय मूल के क्रिओल भाषा-भाषी बच्चे जो केवल रोमन लिपि में साक्षर हों। कुछ लोग दक्षिण और पूर्वी अफ्रीका के भी हो सकते हैं।

6. विदेशी भाषा के रूप में अंग्रेजी भाषी (गोरे) बच्चे।
7. विदेशी भाषा के रूप में अंग्रेजी भाषी (गोरे) वयस्क।

ब्रिटेन में जन्मे विरले बच्चे ही देवनागरी लिपि में साक्षरता घर से अर्जित करके हिन्दी की स्वैच्छिक कक्षाओं में आते हैं। भारतीय मूल के (1-4) और अंग्रेज तथा कैरेबियन (5, 6, 7) शिक्षार्थियों में एक मुख्य अंतर है, उनका हिन्दी से सम्पर्क। भारतीय परिवारों में पहली-दूसरी पीढ़ी की आपस में वार्तालाप की भाषा हिन्दी या दूसरी भारतीय भाषाएँ ही होती हैं। भारतीय बच्चों को इससे जो अदृश्य एवं अस्पष्ट लाभ होता है वह गोरे तथा मारिशस, फिजी या कैरेबियन शिक्षार्थियों को नहीं होता। इसके अलावा वे हिन्दी फिल्मों से भी प्रदर्शित होते हैं। कम से कम इनके शब्दभंडार में हिन्दी के बहुत सारे शब्द पहले से ही होते हैं। इन सबके बावजूद भी कुछ शिक्षार्थियों में हिन्दी ग्रहणशीलता की क्षमता भले ही सीमित हो, किंतु है तो, पर उत्पादकता या उच्चारण की क्षमता नहीं के बराबर होती है। होती भी है तो वे हिन्दी के संवाद का उत्तर, अंग्रेजी का ही सहारा लेकर देते हैं। इन भाषा-स्थितियों को ध्यान में रखकर ही शिक्षकों को हिन्दी शिक्षण युक्ति पर विचार करना होता है।

## पाठ्य पुस्तकों का चयन

आरम्भिक कक्षाओं में शिक्षकों के लिए, वे चाहे कोई भी भाषा, विशेष कर विदेशी भाषा, कहीं भी पढ़ाते हों, विभिन्न स्तरों की पाठ्य पुस्तकों का सही चयन एवं सुव्यवस्थित उपयोग नितांत आवश्यक है। यहाँ जिस प्रक्रिया पर विचार किया जा रहा है वह है हिन्दी का अध्यापन, विशेष रूप से बच्चों के मन में लिखने-पढ़ने की रुचि पैदा करना। इस विषय में इतनी अधिक विविधता है कि यदि प्रथम पाठ्य पुस्तकमाला के अन्तर्गत कुछ प्रकाशित पुस्तकों को आम सहमति मिल भी जाए, तो फिलहाल नहीं है, तो भी यह संदिग्ध ही रहेगा कि कोई एक पाठमाला विद्यार्थियों, अध्यापकों, सांस्कृतिक तथा भौगोलिक संदर्भों और विभिन्न प्रयोजनों के लिए समान रूप से उपयोगी और प्रासंगिक हो सकती है। हिन्दी के कुछ अध्यापक अपने विद्यार्थियों की आवश्यकताओं के अनुरूप ही पुस्तकें चाहेंगे। किन्तु हिन्दी की ऐसी पुस्तकों का विदेश में प्रकाशन आर्थिक कारणों से जटिल ही नहीं असंभव ही दिख

रहा है। हिन्दी शिक्षकों के साथ मिलकर हम गंभीरतापूर्वक इन वर्तमान स्थितियों पर गौर करते रहे हैं।

1. भाषा सीखने-सिखाने के लिए

(क) भारत के हिन्दी प्रदेशों के स्कूलों के लिए प्रकाशित पुस्तकें।

(ख) ब्रिटेन में विभिन्न स्तरों के लिए प्रकाशित थोड़ी सी पुस्तकें।

(ग) भारत में स्कूलों के लिए अहिन्दी-भाषी शिक्षार्थियों के लिए लिखी गयी पुस्तकें।

(घ) विदेशों में अहिन्दी-भाषी वयस्क शिक्षार्थियों के लिए लिखी गयी पुस्तकें।

2. शैक्षिक सिद्धान्तों पर आधारित पुस्तकें

(क) अक्षर (देवनागरी लिपि), ध्वनि, व्याकरण एवं प्रयोग के लिए।

(ख) स्थिति-परक, संप्रेषणात्मक भाषा का प्रयोग दैनिक वार्तालाप के लिए।

(ग) अंग्रेजी-हिन्दी, हिन्दी-अंग्रेजी शब्दकोश।

3. संस्कृति एवं इतिहास पर आधारित पुस्तकें -

पारम्परिक, धार्मिक, लोककथाएँ जिनमें भारत का सांस्कृतिक इतिहास होता है।

शैक्षिक दृष्टिकोण से ब्रिटेन में पले विद्यार्थियों के लिए किताबों का चयन एवं लेखन, यहाँ के संदर्भ और ऊपर लिखी अन्य बातों को ध्यान में रख कर करना होगा। भारत में प्रकाशित पुस्तकें जो यहाँ मिलती हैं, वे शिक्षकों के लिए तो ठीक हैं, पर वे यहाँ के शिक्षार्थियों की उम्र और योग्यता पर आधारित न होने के कारण उनके लिए उतनी उपयोगी नहीं होतीं। कुछ शब्दावली और कुछ-कुछ सम्मिश्र वाक्य-संरचना की जानकारी न होने के कारण बच्चों को कठिनाई होती है। इन पुस्तकों में ब्रिटेन में बड़े होने वाले बच्चों के दैनिक जीवन के अनुभवों पर आधारित विषयों की कमी होती है। यदि 'मंकी पज्ल', 'द ग्रेफलो', 'स्लीपिंग ब्यूटी', 'चार्ली एण्ड द चाकलेट फैक्ट्री' जैसी छोटे बच्चों की किताबें या उनके अनुवाद हिन्दी में उपलब्ध हों तो अल्पसंख्यक हिन्दी समुदाय के बच्चों में अवश्य ही हिन्दी के प्रति रुचि पैदा हो जाएगी। साथ ही ब्रिटिश संस्कृति, जिससे यहाँ के बच्चे और

वयस्क परिचित होते हैं, उस पर आधारित पुस्तकों की आवश्यकता होगी। भारतीय संस्कृति तो उनकी अस्मिता के लिए जरूरी है ही, पर शिक्षार्थियों में जब थोड़ी भाषिक परिपक्वता आ जाए तब वैसी किताबें ज्यादा उपयुक्त होंगी। इसका अर्थ यह नहीं है कि बच्चे या वयस्क भारतीय संस्कृति एवं इतिहास पर किताबें अंग्रेजी में न पढ़ें। और इसका अर्थ यह भी नहीं कि भारतीय समाज एवं परिवार के जो आपसी संबंधों को प्रदर्शित करने के लिए हमारी संस्कृति से जुड़े शब्द हैं उन्हें पाठ्यसामग्री में स्थान न दें। मेरे सुझाव का तात्पर्य सिर्फ यह है कि हिन्दी की आरम्भिक पाठ्य सामग्री में शिक्षार्थियों के वास्तविक जीवन को प्रतिबिम्बित करने का प्रयोजन नितान्त आवश्यक है। नहीं तो उनकी दिलचस्पी ही धीरे-धीरे लुप्त होती जाएगी और भाषा विस्थापन की प्रक्रिया शुरू हो जाएगी। कुछ हद तक तो यह शुरु हो ही चुकी है। आपसी संबंधों में संबोधन के शब्द जैसे 'चाचा-चाची, मामा-मामी, बुआ-फूफा' सिकुड़ कर 'अंकल और आंटी' बन गए हैं। हिन्दी की बंधुतावादी शब्दावली, अर्थ एवं हमारी संस्कृति पर आधारित व्यवहार की कुंजी है। हर संबोधन शब्द अर्थगर्भित है, मामा का रिश्ता चाचा के रिश्ते से फर्क है। 'चचेरी और ममेरी बहन' और 'बहन' में बहन संज्ञा है, 'चचेरी, ममेरी' विशेषण हैं। चूँकि तीसरी पीढ़ी का बच्चा रिश्ते की इस बारीकी का सांस्कृतिक मूल्य नहीं जानता, वह कहता हुआ सुना जाता है - 'वह मेरा, मेरी कज्न है'। भारतीय अंग्रेजी ने मानक ब्रिटिश अंग्रेजी से मुँह मोड़ कर इन रिश्तों को जीवित रखने के लिए नया प्रयोग शुरू किया 'कज्न ब्रदर' और 'कज्न सिस्टर' का। अभिभावकों को इस स्थिति का जायजा गम्भीरता से लेना चाहिए। शिक्षकों को पाठ्य सामग्री में इन शब्दों के प्रयोग पर अभ्यास बनाना बहुत लाभप्रद होगा। इसी भाषा और संस्कृति के अनुबंध की चर्चा करते हुए मैं अब हिन्दी के सर्वनामों के प्रयोग के विषय में थोड़ी सी बात करूँगा। यहाँ मैं केवल मध्यम पुरुषवाचक सर्वनाम, 'तुम' और 'आप' की बात करूँगा। 'आप' आदर सूचक माना जाता है, 'तुम' अनादर सूचक तो नहीं है, पर इसका प्रयोग अपने से बड़ों को सम्बोधित करने में नहीं किया जाता, ईश्वर को छोड़ कर। अंग्रेजी में 'आप' और 'तुम' दोनों के लिए केवल एक सर्वनाम है 'यू'। अप्रवासी बच्चे 'आप' के प्रयोग के महत्व को भूलते जा रहे हैं। इसके साथ-साथ उनमें एक और प्रवृत्ति पनपने लगी है। अपने से ही बड़ी

बहन या भाई को वे उनके नाम से सम्बोधित करने लगे हैं, जबकि उन्हें दीदी, जीजी, दादा, भइया शब्दों का प्रयोग करना चाहिए। कुछ हद तक यह अंग्रेजी भाषा एवं संस्कृति का प्रभाव है।

लेखक एवं शिक्षकों को साक्षरता एवं वाचन पर भी ध्यान देना होगा, क्योंकि इन बच्चों के भाषा-अनुभव में अंग्रेजी का विशेष प्रभाव पड़ेगा। उदाहरण के लिए हिन्दी और अंग्रेजी स्वन व्यवस्था को देखें। दोनों में अल्पप्राण और महाप्राण स्पर्श व्यंजन हैं, पर उनमें महत्वपूर्ण अंतर है जिसका शिक्षार्थियों के हिन्दी के उच्चारण अर्जन पर प्रभाव पड़ता है। हिन्दी में सघोष तथा अघोष अल्पप्राण और महाप्राण स्पर्श व्यंजन के युग्म होते हैं, जैसे 'क-ख, ग-घ, च-छ, ज-झ, ट-ठ, ड-ढ, त-थ, द-ध, प-फ, ब-भ'। अंग्रेजी में सघोष महाप्राण स्पर्श व्यंजन नहीं होते। फलस्वरूप आरम्भ में बच्चों को 'घर' शब्द के उच्चारण में 'घ' ध्वनि उच्चारित करने में कठिनाई होती है। उसी प्रकार 'झ, भ' ध्वनियाँ भी मुश्किल होती हैं। अंग्रेजी में दंत्य स्पर्श और मूर्धन्य स्पर्श की ध्वनियों के न होने से भी हिन्दी में कठिनाई होती है। न्यूनतम युग्म जैसे 'गिरना-घिरना, बाग-बाघ, जूठा-झूठा, डाल-ढाल' के अभिरचना-अभ्यास से शिक्षार्थियों को लाभ होता है। कुछ ध्वनियाँ अरबी, फारसी, अंग्रेजी के शब्दों के साथ हिन्दी में आ गई हैं, जैसे 'फ, ज, ख'। भारत में कुछ हिन्दी क्षेत्रों में ये ध्वनियाँ लुप्त हो गई हैं और हिन्दी की पत्रिकाओं में भी नहीं दिखतीं, पर मानक हिन्दी में अभी भी इनका अपना महत्व है। हमारे अंग्रेजी-भाषी बच्चों को 'फ, ज' में तो कोई परेशानी नहीं होगी, पर उन्हें 'ख' सिखाना पड़ेगा। जो बच्चे फ्रेंच पढ़ रहे होते हों तो उन्हें दंत्य ध्वनियों 'त, द' और कंठ्य व्यंजन 'ख' की ओर निर्देशित करने से इन ध्वनियों को अर्जित करने में लाभ होगा।

ध्वनियों के साथ-साथ लेखक एवं शिक्षकों को व्याकरण और प्रयोग पर भी ध्यान देना होगा। हिन्दी की वाक्य संरचना में 'क्रिया, पक्ष और काल' पर ध्यान देना आवश्यक है। पूर्णतावाची पक्ष तथा अपूर्णकालिक पक्ष अंग्रेजी में भी है, और कर्ता का रूप दोनों वाक्य संरचना में समान ही होता है। हिन्दी में दोनों में फर्क है। सकर्मक क्रिया के साथ पूर्णतावाची पक्ष वाले वाक्यों में कर्ता के साथ ने का प्रयोग बहुत जरूरी है। उदाहरण के लिए - 'मणि सुबह में हिन्दी पढ़ता है।' मणि

ने सुबह में हिन्दी पढ़ी। अकर्मक क्रिया वाले वाक्यों में पूर्णतावाची पक्ष होने पर भी ऐसा नहीं होता, उदाहरण के लिए 'मणि अभी तक नहीं सोया'। ने के इस प्रयोग पर विशेष ध्यान देना होगा क्योंकि कुछ क्षेत्रों में ने का प्रयोग अपूर्णकालिक पक्ष वाले वाक्यों में भी होता है, जैसे मणि ने बाजार जाना है। व्याकरण की दृष्टि से यह मानक हिन्दी के नियमों के अनुसार उचित नहीं है। प्रोक्ति विश्लेषण में हमें पता चलता है कि 'ने' का प्रयोग करके वक्ता ने संकेत कर दिया है कि वह किसी घटित घटना की बात करने जा रहा है। 'मणि ने बाजार जाना है' से कुछ क्षण के लए गलतफहमी हो सकती है। अंग्रेजी में कर्ता के साथ पूर्णतावाची पक्ष वाले वाक्यों में 'ने' की तरह कुछ नहीं होता।

हिन्दी व्याकरण में शब्द रुप प्रक्रिया की दृष्टि से 'चाहना' क्रिया अंग्रेजी-भाषी हिन्दी शिक्षार्थियों के लिए महत्वपूर्ण है। 'चाहना' और क्रियाओं की तरह है, पर चाहिए के दो रूप और प्रयोग हैं, एक तो 'चाहना' सामान्य क्रिया की तरह, दूसरा वृत्तिवाचक सहायक क्रिया की तरह। उदाहरण के लिए 'मणि हिन्दी की किताब चाहता है।' 'मणि को हिन्दी की किताब चाहिए।' दोनों वाक्यों का अर्थ एक समान ही है। चाहिए का दूसरा प्रयोग और अर्थ बिलकुल फर्क है। 'मणि को हिन्दी की किताब खरीदनी चाहिए।' शिक्षकों को चाहिए कि शिक्षार्थियों का ध्यान दो बातों की ओर आकृष्ट कराएँ, एक तो 'चाहिए' क्रिया अपना रूप नहीं बदलती, दूसरे इसका प्रयोग जब सुझाव और दायित्व के अर्थ में होता है तब कर्ता को विकारी कारक (को) की तथा वाक्य में एक और मुख्य क्रिया की आवश्कयता होती है, जैसे 'खरीदनी', जिसका रूप कर्ता के बदले कर्म के लिंग और वचन से निर्धारित होता है। अगले वाक्य से संज्ञा और क्रिया के बीच की अन्विति के नियम का पता चलेगा, 'मणि ने अनुपम को किताब दी।' इस वाक्य में एक गौण कर्म है 'अनुपम' और एक मुख्य कर्म है 'किताब'। यहाँ कर्ता और गौण कर्म दोनों विकारी कारक के साथ हैं इसलिए मुख्य कर्म ही क्रिया का लिंग और वचन निर्धारित कर रहा है। यहाँ यह ध्यान रखने की बात है कि व्याकरण पर आधारित वाक्य-संरचना का यह विश्लेषण प्राथमिक स्तर के शिक्षार्थियों के लिए उचित नहीं होगा। विश्वविद्यालयों के विदेशी विद्यार्थी जो स्कूलों में एक या दो विदेशी भाषाएँ-सीखने का अनुभव कर चुके होते हैं, उनके लिए तो यह ठीक है। जो विद्यार्थी, भारतवंशी या अन्य, माध्यमिक विद्यालयों में विदेशी भाषाएँ सीख रहे होंगे, उनके लिए भी ठीक होगा। मैं

निर्देशात्मक/अनुशासनमूलक व्याकरण, की वकालत नहीं कर रहा, शैक्षिक व्याकरण/ प्रकार्यात्मक व्याकरण की कर रहा हूँ जिसमें व्याकरण नियमों को रट कर भाषा सीखने की प्रक्रिया को नहीं कहते, व्याकरण भाषा की रूपरेखा, वाक्य संरचना तथा प्रयोग को समझने की प्रक्रिया को कहते हैं। इसे व्यावहारिक व्याकरण भी कहा जा सकता है। इसमें व्यतिरेकी व्याकरण की सहायता ली जाती है। जो भाषा शिक्षार्थी की मातृभाषा या जिस भाषा में शिक्षार्थी को मातृभाषा की तरह क्षमता अर्जित हो गई है, उसमें और लक्ष्य भाषा की उपयुक्त स्थिति में तुलना लाभप्रद होती है। ब्रिटेन के सन्दर्भ में हम हिन्दी-अंग्रेजी की बात कर रहे हैं।

अब मैं संक्षेप में भाषा शिक्षण विधियों की बात करूँगा। भाषा शिक्षण विधियों का सम्बन्ध भाषा-शिक्षण एवं भाषा-अधिगम के उद्देश्यों से भी है। प्रश्न यह है कि ब्रिटेन में हिन्दी शिक्षण की क्या आवश्यकता है और किसके लिए? अपने आलेख के आरम्भ में मैंने हिन्दी शिक्षार्थी समुदाय को सात कोटियों में विभाजित किया था। उनमें छटे वर्ग के गोरे बच्चों की संख्या बहुत कम है। भाषा-अधिगम के उद्देश्यों में तीन प्रमुख हैं - आर्थिक कारण, सांस्कृतिक कारण और विरासती अस्मिता के संरक्षण का कारण। अकादमिक कारण भी हो सकता है क्योंकि कुछ लोग भारतीय इतिहास, राजनीति, हिन्दी भाषा एवं साहित्य के क्षेत्रों में शोध और शिक्षण करना चाहते हैं। कुछ की दिलचस्पी पत्रकारिता में होती है। विदेशी भाषा के रूप में हिन्दी पढ़ने वाले छात्र अधिकतर आर्थिक कारणों से, सरकार के विभिन्न मंत्रालयों में नौकरी के लिए, विशेष कर विदेश मंत्रालय में, विश्वविद्यालयों में या भाषा-संस्थानों में हिन्दी पढ़ते हैं। ये हैं सातवीं कोटि के शिक्षार्थी। पाँचवीं कोटि के शिक्षार्थियों के पूर्वज सदियों पहले भारत से मारीशस, फिजी, कैरेबीयन आदि देशों में ब्रिटिश सरकार की उपनिवेशवादी प्रतिरोपण नीति के शिकार बने थे। इस कोटि के कुछ लोग जो ब्रिटेन में प्रवासी की तरह बस गए हैं। उनके पौत्रादि अब अपने पूर्वजों की मातृभाशा भोजपुरी-अवधी-हिन्दी एवं मातृभूमि से जुड़ने के लिए हिन्दी सीखना चाहते हैं। पर उनकी जातीय तथा राष्ट्रीय अस्मिता का संबंध भारत से नहीं रह गया है। इसके साथ ही इनका हिन्दी सीखने का उद्देश्य भी सीमित है। चौथी कोटि के शिक्षार्थियों में हिन्दी का भारतीयता एवं भारतीय राष्ट्रीयता की अस्मिता से जुड़ने की भावना बहुत प्रबल है। इस कोटि के सभी छात्रों की अपनी-अपनी मातृभाषा है, पर इनमें हिन्दू पंजाबी ही हैं जो हिन्दी को द्वितीय

मातृभाषा के रूप में मानते हैं और सबसे अधिक संख्या में इसका अध्ययन भी करते हैं। इसके पीछे इन बच्चों के अभिभावकों के मन में भाषायी राजनीति है या भारतीय संस्कृति, इस पर मैं यहाँ टिप्पणी करना नहीं चाहता। पंजाबी और हिन्दी का शब्द-भंडार और उनकी वाक्य-संरचना भी एक-दूसरे के बहुत नजदीक है। शिक्षकों को पाठ्य सामग्री बनाते समय इससे लाभ उठाना चाहिए। तीसरी कोटि के बच्चों को मैंने अहिन्दी भाषी इसलिए कहा है क्योंकि इनकी पहली भाषा, गृह भाषा, मातृभाषा अंग्रेजी हो गयी है। यदि इनके माता-पिता आपस में भी अंग्रेजी में ही बातचीत करते हैं तब उनके बच्चे हिन्दी की कक्षा में केवल अंग्रेजी में प्रवीणता के साथ आते हैं। पहली और दूसरी कोटि के विद्यार्थी, कक्षा में विश्वस्त हिन्दी भाषी बन कर आते हैं। इनके और इनके अभिभावकों के मन में यह विश्वास रहता है कि हिन्दी और हमारी विरासतीय अस्मिता में अटूट संबंध है।

हिन्दी की कक्षाओं में आने वाले शिक्षार्थियों में जब इतनी विविधता है तब शिक्षक कौन सी शिक्षण विधि अपनाए? ब्रिटेन के हिन्दी शिक्षकों के लिए यह बहुत बड़ी चुनौती है। भाषा शिक्षण विधियों में मैं केवल प्रत्यक्ष विधि, वार्तालाप विधि और द्विभाषी विधि की ओर आपका ध्यान आकृष्ट करूँगा। सबसे पहले शिक्षकों को कक्षा में उपयुक्त हिन्दी भाषायी वातावरण का निर्माण करना होगा। शिक्षार्थियों से बातचीत के दौरान अंग्रेजी का कम से कम प्रयोग करना होगा। यह हम सब जानते हैं कि भाषा का मूल स्वरूप मौखिक होता है। सभी छात्रों का मुख्य उद्देश्य हिन्दी सुनना, समझना, बोलना है, और होना चाहिए भी। शिक्षकों का मुख्य उद्देश्य होना चाहिए हिन्दी सुनाना, समझाना और बोलवाना। ऐसी स्थिति में कक्षा में 'प्रत्यक्ष विधि' को 'वार्तालाप विधि' से जोड़ना पड़ेगा। प्रत्यक्ष विधि से पारंपरिक अभिरचना अभ्यास को निकाल देना होगा। मेरे अनुभव में रटने-दुहराने से भाषा नहीं सीखी जाती। यदि शिक्षार्थी कुछ सीख भी लें तो वह सतही ही होगा, न उसका कोई व्यावहारिक लाभ होगा, न उससे उनका कोई संज्ञानात्मक या भाषा विकास हो पाता है। कुछ कक्षाओं में शिक्षार्थियों को सुनने, समझने, बोलने के भाषा कौशल ग्रहण करने से पहले ही देवनागरी लिपि एवं वर्तनी पढ़ाना शुरू कर देते हैं। कुछ माँ-बाप बच्चे के लेखन कौशल से प्रभावित हो जाते हैं, पर वे भूल जाते हैं कि ब्रिटिश माहौल में सुनने, समझने, बोलने में प्रवीणता सबसे जरूरी है। 'वार्तालाप विधि' के साथ हम 'भाषा अंतर्वेशन' को भी जोड़ सकते हैं। इसका एक दूसरा रूप है समग्र

'शारीरिक अनुक्रिया प्रणाली'। अंग्रेजी में इसे 'टोटल फिजिकल रेसपॉस' विधि कहते हैं। जिन शिक्षार्थियों को हिन्दी नहीं आती उनको कक्षा में शुरू-शुरू में इस विधि से पढ़ाया जा सकता है, पर शिक्षक के लिए यह गहन परिश्रम का काम है। जब शिक्षार्थियों को इतनी हिन्दी आ जाए कि वे आपस में और शिक्षक से बिना अंग्रेजी की बैसाखी लिये हिन्दी में बातचीत कर सकें तब शिक्षक उन्हें व्याकरण और व्यतिरेकी (हिन्दी-अंग्रेजी) व्याकरण के आधार पर हिन्दी की ध्वनियाँ और उनका उच्चारण, वाक्य संरचना समझा सकते हैं। मेरे कहने का अभिप्राय यह है कि शिक्षण में ध्वनियाँ, अक्षर, शब्द, वाक्य का क्रमानुसार पाठ्य सामग्री में रखना छात्रों के लिए न दिलचस्प होगा न बहुत लाभकारी। 'वार्तालाप विधि' में व्यावहारिक भाषा और शिक्षार्थियों के अनुभव एवं रुचि पर आधारित विषयों का चयन होता है। हाँ, पाठों में पढ़े शब्दों का पुनरावलोकन करना और नए प्रयोगों को पढ़ाना शब्द, अर्थ एवं प्रयोग बोध कराना सशक्त भाषा शिक्षण का उदाहरण है।

सफल हिन्दी शिक्षण के लिए हिन्दी शिक्षकों के प्रशिक्षण की सुविधाएँ भी अत्यन्तावश्यक हैं। ब्रिटेन के उच्च शिक्षा-संस्थानों में हिन्दी शिक्षक बनने के लिए पी.जी.सी.ई. जैसी कोई सुविधा नहीं है। सफल हिन्दी शिक्षक बनने के लिए हिन्दी शिक्षण एवं हिन्दी के प्रचार-प्रसार के प्रति समर्पित होना आवश्यक है। उनके लिए हिन्दी व्याकरण का ज्ञान और शिक्षण में मानक हिन्दी के स्वरूप का ज्ञान भी बहुत अनिवार्य है।

अब प्रश्न उठ सकता है परीक्षा और पाठ्यक्रम का। परीक्षा में सफल होना शिक्षा में हम सब का लक्ष्य होता है, और होना भी चाहिए। पर गंभीरता से सोचने की बात यह है कि क्या हिन्दी सीखने का लक्ष्य वहीं पर सीमित हो जाना चाहिए? मेरी समझ में यह बहुत बड़ी भूल होगी। ब्रिटेन में विदेशी या विरासती केल्टिक भाषा शिक्षण का इतिहास बहुत सफलता का नहीं रहा है। यहाँ की वेल्श और गेलिक भाषाओं को पुनर्जीवित करने का और जीवित रखने का प्रयास किया जा रहा है। वेल्श और गेलिक अपने क्षेत्रों में सीमित जगहों और कुछ परिवारों में सिमट कर रह गई है। अंग्रेजी के स्वामित्व, आर्थिक एवं राजनीतिक प्रभुत्व के कारण राष्ट्रीय पाठ्यक्रम के द्वारा सभी राजकीय सुविधाओं के बावजूद भी इन भाषाओं का भविष्य उतना उज्ज्वल नहीं दिख रहा है जितना होना चाहिए था। अब

रही बात हिन्दी अध्ययन-अध्यापन की। आधुनिक भाषा के राष्ट्रीय पाठ्यक्रम भी जब जी.सी.एस.ई. और ए लेवेल की परीक्षाओं में ही हिन्दी नहीं रह गई तब इसका शैक्षिक महत्व उतना नहीं रह गया। दूसरी परीक्षाएँ जो उपलब्ध हैं भी उनका पाठ्यक्रम न ब्रिटिश संदर्भ में, न ही ब्रिटिश भारतवंशी बच्चों को ध्यान में रख कर गठित किया गया था। जब बच्चे एक हाथ में फ्रेंच की किताब लेते हैं और दूसरे में भारत में प्रकाशित हिन्दी की, तब उन्हें थोड़ी निराशा तो होती ही है। हिन्दी की पढ़ाई स्वैच्छिक कक्षाओं में शनिवार-रविवार के दिन होती है जब कि फ्रेंच, जर्मन आदि भाषाओं की मुख्य धारा के अन्तर्गत स्कूलों में। फ्रेंच, जर्मन आदि भाषाओं के शिक्षक भाषा-शिक्षण में प्रशिक्षित होते हैं, पर हिन्दी के नहीं। इन प्रतिरोधी स्थितियों के बीच भी अनेक शहरों में हिन्दी की कक्षाएँ चल रही हैं। हिन्दी अध्ययन-अध्यापन का मुख्य श्रेय उन शिक्षकों को है जो बड़ी निष्ठा से अपना योगदान दे रहे हैं। साथ ही उन थोड़े से अभिभावकों को भी जो समय निकाल कर बच्चों को कक्षाओं में ले जाते हैं। सभी सुविधाओं के होते हुए भी अधिकतर शिक्षार्थी इन भाषाओं में प्रवीणता नहीं ग्रहण कर पाते। जो शिक्षार्थी जी.सी.एस. ई, और ए लेवेल की परीक्षाओं में उत्तीर्ण भी हो जाते हैं वे धीरे-धीरे अपनी प्रवीणता खो बैठते हैं, क्योंकि कक्षा के बाहर इन भाषाओं से उनका सम्पर्क कभी नहीं होता। न समाज में, न परिवार में ये भाषाएँ बोली जाती हैं, और फ्रांस, जर्मनी जाकर बहुत कम शिक्षार्थी भाषा अंतर्वेशन का अनुभव करते हैं। फ्रेंच या जर्मन के साथ उनकी भाषायी या जातीय अस्मिता भी नहीं जुड़ी है। हिन्दी की स्थिति फर्क है। कम से कम हिन्दी-भाषी परिवारों में तो यह अपेक्षा की जाती है कि घरों में वार्तालाप की भाषा हिंदी होगी। जिन परिवारों में माँ-बाप बच्चों से हिन्दी में बातचीत नहीं करते, उनमें भी बच्चे भाषा सुनते तो रहते हैं। निष्क्रिय द्विभाषी एक भाषी से अच्छे होते हैं। पर निष्क्रिय द्विभाषी से एक भाषी बनने में देर नहीं होती। इन बच्चों की सम्प्रेषणात्मक आवश्यकताएँ अंग्रेजी पूरी करने लगती हैं। कई हिन्दी परिवारों में यह अक्सर पाया जाता है कि हिन्दी भाषा का पीढ़ीवत अनवरत निस्सरण नहीं होता। इस भाषा-विस्थापन की स्थिति को रोक कर भाषा-संरक्षण का भार शिक्षकों को सौंप देना न्यायसंगत नहीं लगता। दुनिया भर में भाषा-विस्थापन के क्षेत्र में शोध करने वालों ने यह पाया है कि यदि मातृभाषा का निष्कासन घर और परिवार से हो जाता है तब वह वापस नहीं आती।

# हिन्दी शिक्षण की समस्याएँ और हिन्दी अध्यापकों की योजना, समस्या व समाधान

— अर्चना पैन्यूली

## हिन्दी भाषा की उत्पत्ति व विकास

लगभग 1500 से 500 ईसा पूर्व वैदिक संस्कृत एक भाषा से दूसरी भाषा - लौकिक संस्कृत, प्राकृत, पाली, अपभ्रंश, सौरसेनी, महाराष्ट्री, अर्धमागधी व मागधी भाषाओं में रूपान्तरित हुई। हिन्दी सौरसेनी के माध्यम से विकसित हुई और इंडो-आर्यन समूह की भाषा मानी जाती है। मुगलकाल के दौरान फारसी के साथ हिन्दी-उर्दू बोलचाल की भाषा बनी। स्वतंत्रता आन्दोलन में हिन्दी का जोरदार विकास हुआ और यह देश की राजभाषा बन गई। हिन्दी शब्दावली में फारसी, तुर्की, अरबी, पुर्तगाली और अंग्रेजी शब्दों का समावेश है। यद्यपि वेद, उपनिषद जैसे समृद्ध भारतीय इतिहास की सृष्टि प्राचीन काल से ही होती आयी है, लेकिन मानक हिन्दी, यानि खड़ी बोली का विकास अगर देखा जाये तो मात्र एक हजार वर्ष पुराना है। हमारा प्राचीन साहित्य अवधी व ब्रजभाषा में है क्योंकि वे मानक हिन्दी, जिसे खड़ी बोली कहा जाता है, से पहले विकसित हो गई थीं। विशुद्ध हिन्दी साहित्य तो मात्र सात सौ वर्ष पुराना है जब तेरहवीं सदी में सूफी कवि अमीर खुसरों ने इसका उपयोग किया। आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी ने हिन्दी को एक व्यवस्थित स्वरूप देकर समृद्धशाली बनाने में काफी प्रयत्न किया।

अपने एक हजार वर्ष की जीवन-यात्रा में मानक हिन्दी ने निःसन्देह काफी लंबी मंजिलें तय की है। आज हिन्दी एक सशक्त, सुगठित व्याकरण सम्मत और समृद्ध भाषा की सभी अनिवार्यताओं से परिपूर्ण है। देवनागरी एक विशिष्ट लिपि है। मानक हिन्दी हिन्दुस्तान के नौ राज्यों की एक आधिकारिक भाषा के अतिरिक्त एक विशाल जनसंख्या की मातृभाषा व पूरे हिन्दुस्तान की एक सम्पर्क भाषा है। दुनिया में हिन्दी बोलने वालों की संख्या तीसरे नंबर पर है - पचास करोड़ के करीब लोग हिन्दी भाषी हैं। विश्व स्तर की प्रमुख भाषाओं में हिन्दी भी एक है।

मगर हिन्दी में जो पोटेन्शियल, संभावनाएँ हैं, दुर्भाग्य से हिन्दी को वह स्थान नहीं मिल पाया है। दक्षिण राज्यों के द्रविड़, हिन्दी को अपनाना नहीं चाहते। हिन्दी राज्यों में ही हिन्दी की स्थिति का ह्रास हुआ है। बच्चों के लिए व गैर हिन्दी भाषियों के लिए हिंदी मुख्यतः टीवी चैनल्स व बॉलीवुड की ही भाषा बन रही है। साहित्यिक क्षेत्र में हिन्दी की स्थिति दयनीय है। यह सच है कि हिन्दी एक भाषा ही नहीं, हमारी संस्कृति व परम्पराओं की अभिव्यक्ति है। सो देश-विदेश में चलते सामाजिक, सांस्कृतिक व धार्मिक क्रियाकलाप एवं गतिविधियाँ, हिन्दी विकास में निःसंदेह सहायक हैं। बॉलीवुड फिल्में हिन्दी के अस्तित्व को बनाये हुए हैं। मगर यह हिन्दी का अनौपचारिक स्तर है। अगर अनौपचारिक स्तर से हट कर औपचारिक स्तर पर हिन्दी का विश्लेषण करें तो हिन्दी की स्थिति बहुत अच्छी नहीं है।

## हिन्दी शिक्षण की समस्याएँ

वर्णमाला व उच्चारण से सम्बन्धित मुद्दे हिन्दी सीखने वालों को भाषा से सम्बन्धित बहुत सी परेशानियों का सामना करना पड़ता है। वर्णमाला लंबी है। भिन्न मात्राएँ हैं। लिंग निर्धारण में दिक्कत होती है। क्रिया, लिंग के हिसाब से बदल जाती है। सजीवों के अतिरिक्त बेजान वस्तुओं को भी स्त्रीलिंग व पुलिंग से सम्बोधित किया जाता है, मसलन दो लड्डू खाया। चन्द्रबिन्दु व अनुस्वार के प्रयोग को लेकर दुविधा बनी रहती है। संयुक्त व्यंजन के उच्चारण व जानकारी में दुविधा, जैसे ज्ञान, विज्ञान। पाँच प्रकार के 'र' - जैसे प्रकार, अर्जुन में, धर्म, गृहणी एवं ऋषि। इनके उच्चारण में कोई विशेष फर्क नहीं है। गैर हिन्दी भाषियों के लिए क्या कहें हिन्दी भाषियों को भी सारी जिन्दगी अन्तर समझ में नहीं आ पाता और वे इसे व्यवहार में नहीं ढाल पाते।

फिर भी देवनागरी में अन्य भाषाओं की तुलना में दोष बहुत कम हैं, इन्हें सुधारा जा सकता है, बदला जा सकता है। हिन्दी एक वैज्ञानिक व तार्किक भाषा है, जिसकी एक विशेषता यह है कि हर ध्वनि के लिए एक निश्चित वर्ण है व वह सदैव निश्चित है। अंग्रेजी में पाँच स्वर में 20 ध्वनियाँ हैं व 21 व्यंजनों में 24 ध्वनियाँ हैं। यानि 26 वर्णों की 41 ध्वनियाँ हैं। बी यू टी बट होता है पर पी यू

टी पट नहीं होता, वह पुट होता है।

## पाठ्यक्रम व बुनियादी सुविधाएँ

व्यावहारिक तौर पर हिन्दी शिक्षण में मुख्य समस्या यह है कि पाठ्यक्रम में बच्चों में भाषा व साहित्य के प्रति रुझान उत्पन्न करने की नितान्त कमी है। पुस्तकें रोचक नहीं हैं। ढंग के अध्यापक नहीं हैं। शिक्षण विधि व संसाधन उचित नहीं हैं। बच्चों में हिन्दी पढ़ने की जिज्ञासा या ललक पैदा नहीं की जाती। पेशे से एक शिक्षिका होने के नाते मैंने यूरोपीय स्कूलों में देखा कि छोटी कक्षाओं में वर्ग के हिसाब से पाठ्यक्रमों में लेख, कथा-संग्रह व उपन्यास शामिल रहते हैं। छोटी कक्षाओं में बच्चों से रीडिंग करवायी जाती है। बुक्स क्लब होते हैं। पैरेन्ट्स व बड़ी कक्षाओं के विद्यार्थी, छोटी कक्षाओं जैसे के-वन व ग्रेड-वन के बच्चों के साथ बैठ कर रीडिंग करते हैं। एक लेवल की बुक पढ़कर बच्चे दूसरी लेवल की बुक पढ़ते हैं और एक सत्र में बच्चे चार से छः लेवल्स की पुस्तकें पढ़ चुके होते हैं। उन्हें फोनिक्स का अभ्यास करवाया जाता है। बच्चों का व्यक्तिगत मूल्यांकन होता है।

कक्षा छः से बच्चों को एक सत्र में कम से कम छ-आठ पुस्तकों का अध्ययन, समीक्षा लिखना व उनके ऊपर चर्चा करनी पड़ती है। दसवीं कक्षा तक आते-आते एक विद्यार्थी कथा साहित्य की कम से कम सौ पुस्तकें पढ़ चुका होता है। फलस्वरूप बाल्यकाल से ही उनमें पढ़ने की लालसा जागृत हो जाती है। भाषा व साहित्य उन्हें बोझिल नहीं, रोचक लगने लगता है। टिहरी, गढ़वाल विश्वविद्यालय के प्रोफेसर श्री राकेश नौटियाल का कहना है कि भारत में विश्वविद्यालय के भी विद्यार्थी बुक रिव्यू नहीं लिख सकते।

## हिन्दी के प्रति लोगों का रवैया :

कई हिन्दी अध्यापक कहते हैं कि हिन्दी शिक्षण की समस्याओं में एक अप्रत्यक्ष कारण है कि लोग हिन्दी पढ़ना आवश्यक नहीं समझते। हिन्दी के प्रति खुद को गौरवान्वित महसूस नहीं करते। यहाँ अपने कुछ अनुभव लिखने के लिए प्रेरित हो रही हूँ। अभी दिसम्बर में अपनी पिछली भारत यात्रा के दौरान दिल्ली की एक अंग्रेजी स्कूल की शिक्षिका से मेरा मिलना हुआ। वे कहती हैं कि उनके

स्टाफ में एकमात्र वह हैं जो हिंदी पत्रिकाएँ पढ़ती हैं। वह अपने घर के पास की एक लाइब्रेरी से हिन्दी पत्रिकाएँ लेती हैं। पढ़कर वह अपने किशोर आयु की लड़कियों को बोलती हैं कि जाओ ये पत्रिकाएँ लाइब्रेरी में लौटा आओ। बच्चे छुपा कर पत्रिकाएँ लाईब्रेरी में लौटाने जाते हैं ताकि उनका कोई मित्र या साथी न देख ले। नहीं तो वे उपहास बनायेंगे : तुम्हारी मम्मी क्या हिन्दी मैगजीन पढ़ती हैं? अंग्रेजी नहीं पढ़तीं।

जब मैं तेरह वर्ष पूर्व नई-नई डेनमार्क आयी थी तो एक दिन एक हिन्दुस्तानी महाशय मेरे घर तशरीफ लाये। मेरे ड्राइंगरूम में सजी हिन्दी पुस्तकों को देख कर बोलेः पिछले तीस सालों से मैं डेनमार्क में रह रहा हूँ। कई हिन्दुस्तानियों के घर गया हूँ। आपका घर पहला घर है जहाँ मुझे हिन्दी पुस्तकें व पत्रिकाएँ दिखायी दे रही हैं। जिस घर में अंग्रेजी के बजाये हिन्दी अखबार, पत्रिकाएँ व पुस्तकें पड़ी रहती हैं वह परिवार भारतीय समाज में विशिष्ट नहीं माना जाता। हिन्दी कुलीन लोगों की नहीं, अनपढ़ों की भाषा मानी जाती है। क्यों हिन्दी को लेकर हिन्दुस्तानियों में हीन भावना है? क्यों वे हिन्दी पढ़ने से कतराते हैं?

## विदेशों में हिन्दी शिक्षण के मुद्दे :

डेनमार्क स्थित स्टूडियो स्कोले नामक एक प्रतिष्ठित लेंगुएज स्कूल में विदेशियों को हिन्दी पढ़ाने वाली श्रीमती रजनी बहल कहती हैं कि विदेशियों को हिन्दी सिखाने में जो उन्हें एक दिक्कत होती है वह यह कि सरल भाषा में हिन्दी उपन्यास लोगों के लिए उपलब्ध नहीं हैं, जैसे डेनिश, स्पेनिश व अन्य भाषाओं में हैं। किशोरों के लिए जिस हिसाब से अंग्रेजी व अन्य यूरोपीय भाषा में रोचक उपन्यास लिखे जाते हैं, हिन्दी में संख्या न के बराबर है।

श्रीमती कुमुद माथुर डेनमार्क में बीस वर्षों तक प्रवासी भारतीयों के बच्चों (पाँच से पन्द्रह आयुवर्ग) को हिन्दी सिखाने में संलग्न रहीं। बच्चों को हिन्दी सीखने की यह सुविधा डेनिश सरकार की तरफ से उपलब्ध थी। बच्चों का हिन्दी स्कूल किसी तरह घिसटते-घिसटते अन्ततः बंद हो गया। श्रीमती माथुर का कहना है कि स्कूल बंद होने का एक कारण यह भी था कि अपने भारतीय बच्चों में

अपनी मातृभाषा पढ़ने की उतनी ललक नहीं रहती जितनी अन्य देशों, जैसे जापानी, अरबी व चाईनीज बच्चों में रहती है। उनके स्कूल वहाँ अभी भी चल रहे हैं। कुमुद माथुर के लिए सबसे बड़ी चुनौती हिन्दी में बच्चों की रुचि बनाये रखने में ,थी, क्योंकि हिन्दी के प्रति हमारे हिन्दुस्तानियों में कोई श्रद्धा नहीं। अभिभावक ही कहते हैं - हमारे बच्चे हिन्दी पढ़ कर क्या करेंगे?

## मातृभाषा को अपर्याप्त महत्व : एक वैश्विक समस्या

अंग्रेजी विश्व की सभी भाषाओं पर प्रभुत्व जमा रही है। विश्व की कई भाषाएँ आज खतरे में हैं। कहा जा रहा है कि कुछ वर्षों के उपरान्त विश्व में मौजूद लगभग सात हजार भाषाओं में से आधी भाषाएँ विलुप्त हो जायेंगी। क्योंकि नई पीढ़ी, यानि बच्चे उन्हें सीख नहीं रहे हैं। भाषा-संस्कृति विभाग रोसकिल्ड यूनीवर्सिटी डेनमार्ग के प्रोफेसर टोव स्कटनब कंगस कहते हैं : यह अति आवश्यक है कि बच्चे आरम्भिक शिक्षा अपनी मातृभाषा में प्राप्त करें। यदि किन्हीं परिस्थितिवश यह संभव नहीं है तो भाषा-विषयक विषयों में उनकी प्रमुख भाषा उनकी मातृभाषा होनी चाहिए, ताकि वे अपनी भाषा को अच्छी तरह से सीख सकें। कई स्कूलों में बच्चों को अपनी भाषा सीखने का कोई अवसर नहीं है, बल्कि उनकी भाषा का वहाँ पूरा विरोध किया जाता है। बच्चे अपने विचार-भाव सबसे अच्छे ढंग से अपनी मातृभाषा में अभिव्यक्त कर सकते हैं। सर्वोच्च शैक्षिक उपलब्धियाँ वे अपनी भाषा में ही हासिल कर सकते हैं। अपनी मातृभाषा की कीमत पर बच्चों को दूसरी, एक विदेशी भाषा सीखने पर जोर देना मानवता के खिलाफ भी है। इसके लिए अभिभावक, स्कूल व शिक्षा प्रणालियाँ सभी दोषी हैं।

मैं एक आईबी वर्ल्ड स्कूल में अध्यापन करती हूँ। मातृभाषा शिक्षण के नये प्रयासों के तहत आईबी वर्ल्ड प्रोग्राम ने पिछले साल स्कूलों में एक सरकुलर पास किया कि सभी स्कूल बच्चों को अपनी भाषा सीखने के लिए अवसर प्रदान करें। छात्रों के द्विभाषी शिक्षण में सबसे पहले मातृभाषा में कौशल प्राप्त हो या फिर दूसरी उसकी सबसे करीबी भाषा। आई डिप्लोमा, यानि बारहवीं बोर्ड में बच्चे अपनी मातृभाषा का चुनाव कर सकते हैं। मगर मैंने देखा है कि कुछ भारतीय छात्र जो हिन्दी लेना चाहते हैं उनके लिए न तो अध्यापक उपलब्ध हैं और न ही संसाधन।

शिक्षाविदों ने पता लगाया कि जब कोई बच्चा जितने अधिक वर्ष अपनी मातृभाषा में शिक्षा हासिल करता है, आगे चलकर वह अपनी भाषा के अलावा दूसरी प्रभावी भाषा जैसे अंग्रेजी, फ्रैंच या जर्मन आदि को भी अच्छे से समझता है। बच्चे जो द्विभाषी व बहुभाषी होते हैं, समाज व दुनिया को अच्छा परखते हैं। अपनी मातृभाषा में एक ठोस बुनियाद गढ़ना शैक्षिक विकास के लिए जरूरी है, साथ ही यह आगे चल कर एक अतिरिक्त भाषा सीखने में भी सहायक होती है। शिक्षाशास्त्री डॉ. कारलोस अल्बर्टो कहते हैं कि यह सही है कि ग्लोबलाइजेशन के इस युग में हम विश्व को समझें, दूसरी भाषाओं व संस्कृति को बूझें, पर सबसे पहले अपने खुद के स्रोतों को तलाशें, वहाँ से प्रेरणा हासिल करें। दूसरों की भाषा व संस्कृति जानने से पहले अपनी भाषा व संस्कृति को जानें। अगर कोई अपने प्रदेश से बाहर निवास कर रहा है तो मातापिता अपने बच्चों को, उस क्षेत्र की भाषा के अतिरिक्त अपनी मातृभाषा सीखने के भी अवसर प्रदान करें। एक शिशु का मस्तिष्क स्पंज की तरह होता है। अपने जीवन के आरम्भिक वर्षों में बच्चा दो-तीन भाषाएँ बड़ी आसानी से सीख सकता है, अगर उसे अवसर प्राप्त है।

## समाधान के लिए कुछ सुझाव

### आज के डीजिटल युग के बच्चों के अनुरूप शिक्षा प्रणाली :

समय के साथ मातापिता का अपने बच्चों को पालने-पोसने का तरीका बदल रहा है। आजकल के बच्चे पुराने जमाने के बच्चों से भिन्न हैं। वे डीजिटल युग के बच्चे हैं, अपने अभिभावक व अध्यापकों से अलग तरह से पेश आते हैं। साधरणतः आजकल के बच्चे ज्यादा होशियार व जागरूक हैं। वे कई काम एक साथ कर लेते हैं - म्यूजिक सुनना, टीवी देखना, होमवर्क करना, इन्टरनेट पर यार-दोस्तों के साथ चिटचेटिंग करना, एसएमएस भेजना, तकनीकी विकास में जो क्रान्ति आयी है उसका सबसे गहरा प्रभाव बच्चों पर पड़ा है। स्कूल व अध्यापक भी, तकनीकी में आये इस क्रान्ति से अछूते नहीं रह सकते। पढ़ाने की पुरानी, उपदेशात्मक रीति अपना महत्व खोती जा रही है। आजकल की शिक्षण विधि पारंपरिक सिद्धान्तों से अलग होकर बच्चों को खुद ही अन्वेषी होने को प्रेरित

करती है। विषय-वस्तु पर छानबीन कर अपनी खोज व अन्वेषण का क्लास के सामने प्रस्तुतीकरण कर अध्यापक की भूमिका निभाने में बच्चों को आनंद आता है। उन्हें एक आत्मवृत्ति मिलती है। उनकी यह चाहत कि स्कूल व कक्षा में सहपाठियों के बीच उन्हें कुछ मान्यता मिले, उनकी सराहना हो, इसकी पूर्ति भी होती है।

अब तो आलम यह है कि अगर एक अध्यापक क्लास में खुद ही बोलता जाये तो उसे एक अच्छा अध्यापक नहीं समझा जाता। ब्लैकबॉर्ड टीचिंग, चॉल्क एण्ड टॉल्क आज के जमाने में प्रभावी शिक्षा पद्धति नहीं समझी जाती। प्रभावशाली शिक्षण के लिए जरूरी है कि टीचर अपने को लगातार बोलते रहने से रोके। अपने विद्यार्थियों को नये उदाहरणों व अन्तर्दृष्टि के साथ आने दे। बच्चे की कल्पना, अनुभव, सृजनशीलता व जो उसमें अनंत संभावनाएँ हैं उन्हें स्पेस दिया जाये। उनके विचारों व मनोभावों को प्रकट होने दे। यह आवश्यक है कि बच्चों को पर्याप्त अवसर व चुनौती मिले, जिससे वे सफलता हासिल करने के लिए प्रोत्साहित हों। आज अध्यापक गुरु व ज्ञानकर्ता नहीं, सुगमकर्ता है, जिसका काम ऐसा वातावरण उत्पन्न करना है कि बच्चे प्रेरित हों। अध्यापन पढ़ना-पढ़ाना नहीं, बल्कि सीखना-सिखाना हो गया है। अब तो बच्चे की अभिव्यक्ति व अधिकार की ही बात ज्यादा है।

यह भी समझने की आवश्यकता है कि आज बच्चों के लिए मानक हिन्दी का क्या अभिप्राय है। समय के अनुसार हिन्दी को विकसित करने की आवश्यकता है। पचास साल पहले हिन्दी में संस्कृत शब्दों का वर्चस्व था। आज मानक हिंदी में अंग्रेजी शब्द कोशों का है। समय के साथ भाषा का भी वैश्वीकरण हो रहा है। अगर कोई शब्द मेरे भाव अच्छे से व्यक्त कर सकते हैं तो उसका प्रयोग करने से हिचकना क्यों। अब हमें यह स्वीकार कर लेना चाहिए कि अंग्रेजी आज एक ग्लोबल लेंगुएज है। लोग कुछ शब्द व भाव अंग्रेजी भाषा में बेहतर समझते हैं, तो उसका प्रयोग करने से झिझक क्यों? हमें हिन्दी को उदार बनाना पड़ेगा। अंग्रेजी में हजारों शब्द हर साल जुड़ते हैं जिनमें बहुत सारे दूसरी भाषाओं से आते हैं। भाषा शिक्षण के लिए एक व्यावहारिक विश्लेषणात्मक दृष्टिकोण का होना अनिवार्य

है। भाषा शिक्षण के लिए एक अन्तर आमतौर पर करना अनिवार्य है कि भाषा व्यक्ति की मातृभाषा है या उसकी दूसरी भाषा या फिर विदेशी भाषा है। यह भी गौरतलब है कि आज के बच्चे क्या, किस विधि व भाषा में पढ़ना चाहेंगे। जब तक शिक्षण में अध्यापक उनके नये सोच-विचार व उनके जीवन में आये आधुनिकीकरण को नहीं दर्शायेंगे, उनको शिक्षण आकर्षित नहीं करेगा। पढ़ाने के लिए एक माडर्न अप्रोच, एक आधुनिक तकनीकी शब्दावली का प्रयोग करना जरूरी है।

विभिन्न शिक्षण विधियों का प्रयोग : बच्चे चाहे दुनिया के किसी भी छोर में रहें, वे प्रतिभा, योग्यता व बुद्धिमता में एक-दूसरे से भिन्न होते हैं। उनका परिवेश अलग होता है। उनकी रुचियाँ व सीखने की क्षमताएँ अलग होती हैं। अध्यापक मात्र एक शिक्षण विधि लेकर नहीं चल सकता। उसे एक क्लास में भिन्न-भिन्न परिवेश से आये भिन्न-भिन्न कुशलता व क्षमता रखने वाले बच्चों को पढ़ाने के लिए एक साथ कई तरीके अपनाने पड़ेंगे, जहाँ सभी बच्चों को अपनी योग्यता दिखाने के पूर्ण अवसर मिल सके। शिक्षा बहुआयामी हो। अध्यापक कई प्रकार के कार्य (असाइनमेन्ट्स) का चुनाव करें, जिन्हें करने में बच्चे अपने विविध कौशल व प्रतिभा - लिखित, वाक्पटुता, सृजनात्मक, ड्रामा-अभिनय आदि का प्रयोग कर सकें। कुछ बच्चे किसी क्षेत्र में अच्छे होते हैं तो कुछ बच्चे किसी में। रिसर्च कहती है कि कुछ बच्चे केवल छोटे समूह में ही खुद को अभिव्यक्त कर पाते हैं। अतएव कभी-कभार बच्चों को छोटे-छोटे समूहों में बाँट कर पढ़ाना चाहिए। जहाँ सभी बच्चों को अपने विचार खुल कर प्रस्तुत करने के अवसर मिल सकें। बच्चे की मौखिक अभिव्यक्ति बाधित न हो। विविध अध्यापक नीतियाँ, नई युक्तियाँ उपयुक्त शिक्षण संसाधन क्लास में शिक्षा प्राप्ति व सीखने के लिए उर्वरक का काम करती हैं।

अब जमाना नहीं रहा कि अध्यापक व्याख्यान करता रहे। बच्चों को पाठ पढ़ाये, कविता सुनाये, कुछ प्रश्नों के उत्तर लिखवाये और बच्चे उन्हें रट लें। नियोजित वादविवाद, चर्चा-बहस, प्रोजेक्ट वर्क, बुक रिव्यू, ऐनालीसिस- विश्लेषण आज की शिक्षा प्रणाली की अहम पद्धतियाँ बन गयी हैं। विषय की खोज, एनसाइक्लोपीडिया व अन्य उल्लिखित पुस्तकों की छानबीन, इन्टरनेट अन्वेषण,

क्लास के सामने प्रेजेन्टेशन या फिर किसी कृति-साहित्य का एनालीसिस कर बुक रिव्यू आलोचनात्मक लेख व निबन्ध लिखना बच्चों के स्वतंत्र चिन्तन व सृजनात्मक शक्ति का विकास करता है। बच्चे की अभिव्यक्तिशीलता व वाग्मिता पैनी होती है। प्लेवे विधि, हिन्दी भाषा पर रचनात्मक कार्यशालाएँ बच्चों में हिन्दी के प्रति रुचि जगायेंगी। किसी भाषा शिक्षण के लिए तकनीक, विकास व प्रभावशीलता पर गौर करना अनिवार्य है। विदेशियों व अप्रवासी भारतीयों के लिए हिन्दी शिक्षण तक विदेशी भाषा के रूप में होना चाहिए। कई स्तरों - शुरुआत, मध्यवर्ती, उन्नत व त्वरित - में उन्हें शिक्षण प्रदान होना चाहिए।

शिक्षण विधि की परियोजना में यह निर्भर करेगा कि विद्यार्थी का परिवेश क्या है। क्या सुविधाएँ उसे उपलब्ध हैं? जैसे प्रोफेसर राकेश नौटियाल का कहना है कि कुछ भारतीय गाँवों व कस्बों में छात्र इतने गरीब घरों के हैं कि शुल्क व पाठ्य पुस्तकें तक वहन नहीं कर सकते, रिसर्च प्रोजेक्ट के लिए लेपटॉप वगैरह कैसे खरीदेंगे। क्लास साइज भी बड़ा होता है, जिससे हर तरह की शिक्षण विधि अपनानी मुश्किल है। यह एक राष्ट्रीय मुद्दा है जो सारी शिक्षा प्रणाली को प्रभावित करता है और जिसका समाधान सरकार व बुद्धिजीवियों को शिक्षण नीतियों के तहत करना होगा। इसके लिए बजट में उचित निधि का निर्धारण करना जरूरी है।

हिन्दी शिक्षण सहायता व संसाधन : हिन्दी शिक्षण को अधिक प्रभावी बनाने के लिए पाठ्यपुस्तकों के अलावा बहुविध उपकरणों का इस्तेमाल, जैसे इलेक्ट्रानिक टीचिंग एड्स, एजुकेशनल (शैक्षिक) डीवीडीज, ऐनीमेशन फिल्में व ऑडियो विजुअल सामग्री का प्रयोग आज के जमाने में हर परिवेश में संभव है। हिन्दी अध्यापकों की समय-समय पर संकाय व व्यवसायिक बैठकों, शैक्षिक सम्मेलनों व शिक्षण प्रशिक्षण कार्यशालाओं में सहभागिता होने से वे समय के साथ स्वयं को अपडेट कर सकते हैं। छात्रों के लिए एक विशिष्ट पाठ्यक्रम, रोचक पुस्तकों का चयन होना चाहिए। बच्चों की कुशलता का आकलन मात्र टेस्ट-पेपर्स व परीक्षाओं से न कर प्रोजेक्ट कार्य, प्रस्तुतियाँ, पुस्तक समीक्षाओं आदि से उनकी कुशलता का आकलन होना चाहिए। छात्रों की हिन्दी पढ़ने, सुनने, बोलने व लिखने की दक्षताएँ आंकी जायें।

## हिन्दी–शिक्षण व हिन्दी–प्रोत्साहन का परस्पर सम्बन्ध

चाहे हम शिक्षण पद्धति में कितना ही सुधार कर लें जब तक कोई प्रोत्साहन नहीं होगा, लोग हिन्दी से कतरायेंगे। जिला शिक्षा एवम् प्रशिक्षण संस्थान हरिद्वार की वरिष्ठ प्रवक्ता श्रीमती सरोजनी नौटियाल कहती हैं कि उनके छात्र साहित्यिक हिन्दी के होते हुए भी साहित्य का कोई प्रसंग नहीं सुना पाते। कोई कविता नहीं, साहित्य से संबंधित कोई अंश नहीं है उनके पास सुनाने के लिए। ऐसा लगता है कि उनके ऊपर हिन्दी थोपी गई है।

हिन्दी को जब तक व्यावहारिक तौर पर उपयोगी नहीं बनायेंगे, बच्चे हिन्दी सीखने के लिए लालायित नहीं होंगे। कहा जाता है कि जब तक कोई भाषा, पेट की भाषा न बने तब तक महत्व नहीं पा सकती। उदाहरण के तौर पर डेनिश मात्र पाँच मिलियन लोगों की भाषा है और पूरे डेनमार्क में फैली है। यहाँ तक कि इमीग्रेन्टस व मल्टीनेशनल में काम करने आये उच्च शिक्षित विदेशियों को भी डेनिश सीखने के लिए बाध्य होना पड़ता है। हिन्दी पाँच सौ मीलियन्स की भाषा है और हिन्दी को वह महत्व प्राप्त नहीं है जो डेनिश या डेनमार्क जैसे कई छोटे मुल्कों की भाषाओं को है। इसका कारण वे भाषाएँ रोजगार की भाषा हैं, व्यापार की भाषा हैं।

यह बात सही है कि अंग्रेजी एक बहुमुखी व अन्तरराष्ट्रीय भाषा है। आज के युग में विभिन्न समुदायों के बीच पारस्परिक विचार–विमर्श व व्यापार बढ़ जाने से अंग्रेजी का उपयोग व महत्व और भी बढ़ गया है। फिर हमारे अतीत के संबंधों की वजह से और विश्व में मौजूद माँग की वजह से अंग्रेजी हम हिन्दुस्तानियों के लिए हमेशा एक महत्वपूर्ण भाषा रहेगी। अंग्रेजी के प्रति उदासीनता दिखा कर हमें अपनी प्रगति नहीं रोकनी। लेकिन हिन्दी के मूल्य पर अंग्रेजी नहीं सीखनी। दोनों भाषाएँ साथ–साथ चलनी चाहिए। गैर अंग्रेजी–भाषी देशों में भी अब लोग अधिक से अधिक संख्या में अंग्रेजी सीखने लगे हैं। लेकिन अंग्रेजी उनकी अपनी राष्ट्रीय भाषा के महत्व को कतई प्रभावित नहीं करती। हमारे देश में अंग्रेजी, हिन्दी ही नहीं हमारी समस्त क्षेत्रीय भाषाओं को तहस–नहस कर रही है। सन 1975 से अंग्रेजी माध्यम वाले स्कूलों की संख्या दिन पर दिन हिन्दुस्तान में बढ़ती जा रही है। हिन्दी माध्यम वाले स्कूलों में ज्यादातर उन्हीं के बच्चे शिक्षा ग्रहण कर रहे हैं

जो अंग्रेजी माध्यम के स्कूलों का खर्चा वहन नहीं कर पाते। अगर आज देखा जाये तो हिन्दी का दरोमदार गरीबों के कंधों पर है। यदि आप समाज के मध्य व उच्च वर्गीय लोगों के बच्चों को देखें तो वे अंग्रेजी माध्यम के स्कूलों में शिक्षा हासिल कर रहे हैं। अंग्रेजी अखबार व साहित्य पढ़ते हैं। अगर हिन्दी अमीर लोग नहीं पढ़ेंगे तो कैसे इसका विकास होगा।

## निष्कर्ष

जनता उसी ओर रुख करेगी जो उसको अधिक लाभकारी दिखेगी। इसके लिए जड़ पर प्रहार करना पड़ेगा। शिक्षण पद्धति में सुधार व नई पीढ़ी के मन में हिन्दी के प्रति जिज्ञासा व अभिमान पैदा करना होगा। हिन्दी शिक्षण को प्रभावशाली बनाने के लिए प्रत्यक्ष व सुसाध्य, दोनों प्रकार के उपाय करने पड़ेंगे। प्रत्यक्ष उपायों में स्कूलों में शिक्षण का एक समुचित ढाँचा, रोचक पाठ्य पुस्तकें, अध्यापकों का उचित प्रशिक्षण हो। कक्षाओं का साइज एक निर्धारित सीमा में हो। पाठ्यक्रम में लघु व दीर्घ, रोचक हिन्दी उपन्यास समावेश करने व बच्चों को उनकी समीक्षा करवाने से बच्चों में रीडिंग हेबिट डेवलप हो सकती है। सही उच्चारण के लिए ऑडियो लेशन्स हों। युग इलेक्ट्रानिक हो चला है तो हिन्दी को हाईटेक इलेक्ट्रानिक भाषा के रूप में विकसित करला होगा। ताकि अंग्रेजी कीबोर्ड व वर्णमाला पर आश्रित न रहना पड़े।

सुसाध्य उपायों में ऐसा माहौल पैदा किया जाये कि अच्छी किताबों का विकास हो। स्कूल व शैक्षिक संस्थानों के बाहर भी हिन्दी सीखने का माहौल हो। हिन्दी भाषा के प्रयोग को लोकप्रिय बनाने के लिए उचित गतिविधियों व कार्यक्रमों को बढ़ावा देना होगा। हिन्दी सोसाईटीज का गठन तथा साहित्यिक कार्यक्रमों के लिए मंच प्रदान करना चाहिए। सार्वजनिक बोल सत्र (पब्लिक स्पीकिंग सैसन्स) व लेखन प्रतियोगिताओं का आयोजन होना चाहिए। हिन्दी पुस्तकों की रोचक लाइब्रेरी स्थापित करनी चाहिए। पढ़ने के लिए कमरे की सुविधा होनी चाहिए। हिन्दी को व्यावहारिक तौर पर उपयोगी बनाना चाहिए। ताकि इसे अपना कर लोग रोजी कमा सकें, स्वयं को सम्मानित व गौरवान्वित महसूस कर सकें। इन सब प्रयासों से शिक्षण तो बेहतर होगा ही, साथ ही साथ हिन्दी की स्थिति भी अच्छी बनेगी।

# मास्को विश्वविद्यालय में हिंदी पढ़ाने का अनुभव

**– बोरिस जाखारीन, लुदमीला खोखलोवा**

एशियाई व अफ्रीकी अध्ययन संस्थान, जहाँ हिंदी के अलावा अरबी, फारसी, चीनी, तुर्की, जापानी, वियतनामी इत्यादि भाषाएँ पढ़ाई जाती हैं, मास्को विश्वविद्यालय का एक अंश है। विद्यालय में चार विधियाँ (फैकल्टीज) हैं : आर्थिक, समाजशास्त्रीय, ऐतिहासिक और फिलोलोजिकल। जहाँ भाषाशास्त्र और साहित्यिक आलोचना की पढ़ाई होती है। जो विद्यार्थी इतिहास चुनते हैं, उनके पाठ्यक्रम में दुनिया भर के (इतिहास, भारतीय इतिहास इत्यादि) ऐतिहासिक विषय शामिल होते हैं। भारतीय भाषा शास्त्र सीखने वालों को आधुनिकतम भाषाविज्ञान के सिद्धांतों को विस्तार से पढ़ना पड़ता है। साहित्यिक आलोचना में दिलचस्पी लेने वाले विद्यार्थियों को आलोचना के प्रमुख सिद्धांत और दुनिया भर के साहित्य का इतिहास पढ़ाया जाता है। इतिहास, भाषाशास्त्र और साहित्यिक आलोचना के विद्यार्थियों के लिए संस्कृत सीखना आवश्यक समझा जाता है। सारे विद्यार्थियों के लिए - चाहे वे समाजशास्त्र, अर्थशास्त्र या भाषाशास्त्र सीखते हों - पश्चिमी भाषाएँ (जिनमें मुख्य अंग्रेजी है) और कम से कम दो भारतीय भाषाएँ सीखना जरूरी है।

भारतीय भाषाओं के विभाग में पहली भारतीय भाषा के तौर पर हिंदी और तमिल पढ़ाई जाती है। दूसरी भारतीय भाषा के रूप में उर्दू, बंगला, मराठी, पंजाबी चुनी जा सकती हैं। हिंदी पहली भारतीय भाषा के तौर पर चार साल के दौरान बी.ए. स्तर पर और दो साल के दौरान एम.ए. स्तर पर पढ़ाई जाती है। पढ़ाई खत्म करने के बाद अच्छे विद्यार्थी शब्दकोश की मदद से कोई भी हिंदी टेक्स्ट पढ़कर रूसी में अनुवाद कर सकते हैं, चाहे यह समाचार पत्र में लिखी खबरें हों, राजनीतिक समीक्षक की कोई टिप्पणी हो या किसी प्रसिद्ध लेखक की लिखी कहानी या निबंध हो। रूसी से हिंदी में भी विभिन्न प्रकार के टेक्स्टों का अनुवाद करना विद्यार्थियों के लिए आवश्यक समझा जाता है।

हिंदुस्तान से दूर रहते हुए सबसे मुश्किल काम है, विद्यार्थियों से बोलचाल का अभ्यास करना। इसलिए हमारे पाठ्यक्रम में शुरू से ही विभिन्न विषयों पर बोलने को विशेष ध्यान दिया जाता है। हम भरसक प्रयत्न करते हैं कि पहले ही

पाठ से विद्यार्थी को यह महसूस हो जाए कि वह कुछ बोल सकता है। विद्यार्थी में यह महसूस करवाना अध्यापक अपना परम कर्तव्य समझता है। इसलिए हमने हिंदी पढ़ाने के लिए ऐसी पाठ्यपुस्तकें चुनी हैं जो हिंदी बोलने का अभ्यास कराने के लिए सबसे अधिक लाभदायक लगती हैं। ये हैं रूपर्ट स्नेल और साईमन वाईटमन की किताब 'टीच योरसेल्फ हिंदी' और केन्द्रीय हिंदी निदेशालय द्वारा प्रकाशित 'हिंदी रिकार्ड/कैसेट की वाचन-पुस्तिका'। दोनों किताबों में ऐसे संवाद हैं जिनकी बुनियाद पर विद्यार्थी अपने संवाद बनाकर पहले ही पाठ से आसान बातचीत कर सकते हैं।

हमारे अध्यापकों ने उपरोक्त दोनों पाठ्यपुस्तकों के लिए अतिरिक्त अभ्यास बनाये हैं, जिनकी सहायता से हिंदी व्याकरण की कठिनाइयाँ दूर की जा सकती हैं। यह समझने के लिए कि हिंदी सीखते समय रूसी विद्यार्थी किस प्रकार की गलतियाँ कर सकते हैं। हमने हिंदी और रूसी भाषाओं का तुलनात्मक अध्ययन किया। यह अध्ययन जरूरी था क्योंकि रूपर्ट स्नेल और साईमन वाईटमन की किताब उन विद्यार्थियों के लिए लिखी गयी हैं जिनकी मातृभाशा अंग्रेजी है। अंग्रेजी और रूसी बोलने वाले विद्यार्थियों को हिंदी भाषा सीखते समय अलग-अलग मुश्किलों का सामना करना पड़ता है। उदाहरण के तौर पर रूसी विद्यार्थियों के लिए 'अपना' जैसे सर्वनाम का प्रयोग करना कठिन नहीं है, क्योंकि रूसी में भी ऐसा सर्वनाम है। जबकि अंग्रेजी बोलने वाले विद्यार्थियों को समझाना पड़ता है कि यह सर्वनाम कैसे इस्तेमाल किया जाए। उल्टा अंग्रेजी व्याकरण में नियमित रूप से यह अंतर प्रकट किया जाता है कि क्रिया का व्याकरण करने वाला खुद कर्ता है या यह व्यापार किसी मध्यस्थ के जरिए किया जाता है। आदमी चाहे खुद कुछ सीता है या किसी से सिलवाता है - रूसी में एक ही क्रिया का इस्तेमाल किया जाता है।

इस बात के बावजूद कि रूसी में प्रेरणार्थक क्रियाएँ नहीं हैं, रूसी विद्यार्थियों को सीने और सिलवाने का अंतर समझाना कोई मुश्किल काम नहीं है। अगर क्रिया सकर्मक है तो सामान्य, आसन्न और पूर्ण भूतकाल में कर्ता के साथ 'ने' परसर्ग लगाना जरूरी है। लेकिन एक बात व्याकरण का नियम समझाना और समझना और दूसरी बात ऐसे अभ्यास कराना जिनके माध्यम से मातृभाषा में अनुपस्थित व्याकरण का अंतर सीखी जाने वाली भाषा में स्वतः आ जाए। अक्सर

यह होता है कि व्याकरण का नियम समझने पर भी विद्यार्थी बोलते और लिखते समय गलतियाँ करते हैं। वे खुद अपनी गलतियाँ ठीक कर सकते हैं, क्योंकि वे व्याकरण का नियम जानते हैं, लेकिन गलतियाँ न आने देने के लिए खास अभ्यास बनाना जरूरी है। अभ्यास बनाकर विद्यार्थियों से कराना भी कोई आसान काम नहीं है क्योंकि व्याकरण का अभ्यास करना विद्यार्थी के लिए सबसे बोरिंग काम है।

जब विद्यार्थी हिंदी सीखने हमारे पास आते हैं तो उनके लक्ष्य अलग-अलग होते हैं। किसी को मास्को विश्वविद्यालय की डिग्री प्राप्त करने की इच्छा है। किसी ने भारतीय इतिहास, भारतीय संस्कृति और साहित्य के बारे में बहुत कुछ पढ़ा है और ज्यादा जानना चाहता है। किसी के माँ-बाप कूटनीतिज्ञ हैं और वह भी विदेश मंत्रालय में काम करना चाहता है। लेकिन किसी भी विद्यार्थी का हिंदी सीखने का लक्ष्य कैसा भी क्यों न हो, शुरू से हर लड़की और हर लड़के को हिंदी सीखने का शौक होता है। बाद में ऊब पैदा हो सकती है और निराशा। निराशा तब पैदा होती है जब विद्यार्थियों को पता चलता हे कि समाजशास्त्र और अर्थशास्त्र के क्षेत्रों में ही नहीं, इतिहास और भाषा के क्षेत्रों में भी अंतरराष्ट्रीय स्तर का अनुसंधान अंग्रेजी में किया जाता है। हिंदुस्तान की यात्रा करते समय अंग्रेजी से काम चलता है। निराशा और ज्यादा बढ़ती है जब विद्यार्थी किसी हिंदी बोलने वाले से मिल के अपना ज्ञान इस्तेमाल करने की कोशिश करते हैं लेकिन संवादकारी अंग्रेजी में जवाब देता है।

इस निराशा को दूर करने के लिए अध्यापकों को बहुत कुछ समझाना पड़ता है। मिसाल के तौर पर यह कि कुछ ऐसे क्षेत्र हैं जहाँ विश्लेषण के लिए सामग्री हिंदी में ही मिल सकती है। उदाहरण के तौर पर भाषाशास्त्र के विद्यार्थियों के लिए हिंदी में लिखे मानक हिंदी के व्याकरण ही नहीं हिंदी बोलियों के व्याकरण भी पढ़ना जरूरी है। समाजशास्त्र के विद्यार्थियों को आम लोगों से बात करने के लिए, टी. वी. आदि जनसंपर्क साधनों द्वारा प्रसारित राजनीतिक वाद-विवाद समझने के लिए अच्छी हिंदी आनी चाहिए। हर विद्यार्थी को - चाहे वह अर्थशास्त्र का विशेषज्ञ बनना चाहता हो या प्राचीन इतिहास सीखना चाहता हो - भारतीय जनता की मानसिकता समझने के लिए, भारतीय जीवन समझने के लिए हिंदी में लिखा गद्य

और पद्य पढ़ना बहुत जरूरी है और अंततः हिंदुस्तानी लोग कितनी अच्छी अंग्रेजी क्यों न बोलते हों उनके साथ तभी असली दोस्ती बनाये रखने की ज्यादा संभावनाएँ हैं जब उनकी मातृभाषा में सम्पर्क होता है। ये सब और बहुत ज्यादा प्रबल तर्क सुनकर कुछ विद्यार्थियों को हिंदी सीखने का उत्साह फिर आता है और अध्यापक को बोरिंग व्याकरण के अभ्यास कराने का एक और मौका मिलता है। लेकिन अध्यापक अच्छी तरह समझते हैं कि इस मौके का दुरुपयोग करना नहीं चाहिए, इसलिए बोलचाल के अभ्यासों को कोई दिलचस्प रूप प्रदान करना बहुत जरूरी है।

बुनियादी पाठ्यपुस्तक पढ़ने पर हम विद्यार्थियों को एक-दो फिल्में दिखाते हैं और एक जासूसी उपन्यास पढ़ाते हैं। फिल्म और जासूसी उपन्यास असली भारतीय संस्कृति का बहुत अच्छा उदाहरण नहीं होते, पर भाषा पढ़ने के लिए वे इसलिए लाभदायक समझे जाते हैं कि उनकी शब्दावली सीमित है और विद्यार्थी बार-बार शब्दकोश के बिना मतलब समझ सकते हैं। फिल्म देखने का एक और फायदा यह है कि ध्वनि अभिलेखन समझने की आदत पड़ जाती है जो लिखित टेक्स्ट समझने से बहुत ज्यादा मुश्किल होता है।

आम तौर पर हम तथाकथित 'फार्मूला' फिल्में चुनते हैं। ऐसी फिल्मों में शब्दावली सीमित होती है, बहुत नाच-गाने होते हैं जो आमतौर पर विद्यार्थियों को पसंद आ जाते हैं। 'फार्मूला' फिल्में चुनने का एक और कारण यह है कि उसके कथानक और संवादों से खेलना आसान है। जबकि गंभीर फिल्म के कथानक, नायकों और संवादों पर मजाक करना कोई अच्छी बात नहीं है।

सबसे पहले हम क्लास में विद्यार्थियों के साथ पूरी फिल्म देखते हैं। हमारा पहला लक्ष्य यह होता है कि हर विद्यार्थी फिल्म का हर वाक्य समझ सके और दोहरा भी सके - वह कितना लंबा क्यों न हो। इसके बाद विद्यार्थी घर पर फिल्म का पूरा टेक्स्ट लिख लेते हैं। अध्यापक रूसी में कुछ मुश्किल वाक्य बनाकर विद्यार्थियों को हिंदी में अनुवाद करने के लिए देता है। शर्त यह होती है कि अनुवाद करते समय सिर्फ फिल्म के शब्द और वाक्य इस्तेमाल किये जाएँ। इस तरह फिल्म के संवाद अच्छी तरह याद किये जा सकते हैं। फिल्म के सारे शब्द और वाक्य अच्छी तरह याद करके हम खेलने लगते हैं। विद्यार्थी पहले कुछ दृश्य (सीन)

बिलकुल इसी तरह दोहराने की कोशिश करते हैं, जैसे वे फिल्म में आये थे। कुछ समस्याएँ भी होती हैं। मिसाल के तौर पर दो-तीन लोग एक ही नायक/नायिका की भूमिका अदा करना चाहते हैं और किसी को दूसरे नायक/नायिका की भूमिका अदा करने की इच्छा नहीं है। लड़कों की कमी भी एक समस्या होती है, खास करके फिलोलोजिकल फैकल्टी में जहाँ ज्यादातर लड़कियाँ आती हैं।

समस्याओं का समाधान करके विद्यार्थी, फिल्म के आधार पर अपने छोटे नाटक बनाते हैं, अपने दृश्यों में अतिरिक्त नायकों को शामिल कराते हैं या फिल्म के नायकों को लेकर संवाद और कहानियाँ बनाते हैं, जिनकी घटनाएँ फिल्म में मौजूद नहीं हैं और जैसा सिनारियों लेखक की दृष्टि से हो भी नहीं सकतीं। हर एक विद्यार्थी दूसरों से ज्यादा अच्छा सीन बनाने की कोशिश करता है। रचनात्मक कार्य की कोई सीमा नहीं, सिर्फ दो शर्ते होती हैं : एक - हँसानेवाली चीज बनानी चाहिए, दो - फिल्म की शब्दावली प्रयोग करना जरूरी है। वैसे तो एक और शर्त है : ठीक हिंदी बोलना। कुछ अध्यापकों का विचार है कि अगर विदेशी भाषा बोलने वाले को रोककर गलतियाँ ठीक करना हो तो वह घबरा जाएगा और रुककर बाद में कुछ न कुछ बोले, तो ठीक हिंदी अपने आप जा जाएगी। हम ऐसे विचारों से सहमत नहीं हैं। हम सोचते हैं कि अपने आप कुछ नहीं आता। अगर प्यार से गलती ठीक करके फिर विद्यार्थी से सही वाक्य दोहराने के लिए कहा जाय तो वह जल्दी अच्छी हिंदी सीखेगा। हमारे विद्यार्थी पढ़ाई के इस तरीके से आदी हो चुके हैं और अगर कोई बाहर का अध्यापक आकर गलतियाँ ठीक नहीं करता तो उसे लापरवाह समझते हैं।

जासूसी उपन्यास भी फिल्म की तरह हँसते-खेलते पढ़ाया जाता है। विद्यार्थी उपन्यास के टुकड़ों को बुनियाद बनाकर नये शब्द इस्तेमाल करके छोटे-मोटे नाटक बनाते हैं। उपन्यास में जिन घटनाओं का या नायकों का वर्णन नहीं हुआ है, उनका वर्णन करते हैं। उदाहरण के तौर पर जासूस का अगला-पिछला खानदान क्या हो सकता है, वह जासूस कैसे बना, उपन्यास खत्म होने के बाद नायकों और खलनायकों को क्या हुआ आदि।

इस तरह एक जासूसी उपन्यास पढ़ने और एक-दो फिल्में देखने के बाद हँसने-खेलने का सिलसिला खत्म हो जाता है और गंभीर टेक्स्ट पढ़ने का समय

आ जाता है। कुछ प्रसिद्ध लेखकों की रचनाएँ इकट्ठा करके हमने एक रीडर बनायी। कहानियों का चुनाव करते हुए हमने इस बात का ख्याल रखा कि उनके माध्यम से छात्रों को भारत की संस्कृति और भारत की आधुनिक समस्याओं का भी ज्यादा से ज्यादा ज्ञान प्राप्त हो सके। इस रीडर में कहानियों का क्रम ऐसा रखा गया।

दूसरे साल के विद्यार्थियों को हम भीष्म साहनी, कृष्न चंदर और अमरकांत की ऐसी कहानियाँ पढ़ाते हैं जो सरल भाषा में लिखी गयी हैं। तीसरे वर्ष के छात्रों के लिए हम मोहन राकेश, कमलेश्वर, काशीनाथ सिंह, प्रेमचंद, राजकमल चौधरी आदि लेखकों की कहानियाँ चुनते हैं। चौथे साल के विद्यार्थियों को पढ़ाने के लिए हम निर्मल वर्मा, रघुवीर सहाय, कृष्ण बलदेव वैद, उदय प्रकाश आदि लेखकों का प्रयोग करते हैं, जिनकी भाषा थोड़ी कठिन होती है। एम.ए. के छात्रों को इन सब लेखकों के साथ-साथ समकालीन नये लेखकों की रचनाओं का भी परिचय दिया जाता है।

रीडर में कहानियों से पहले हर लेखक का परिचय और उसकी रचनात्मकता के बारे में एक संक्षिप्त टिप्पणी भी दी गयी है। हर कहानी से कई अभ्यास और शब्दकोश जुड़े हैं। मुख्य अभ्यासों में निम्नलिखित प्रकार के अभ्यास शामिल हैं। कहानी में मिले नये शब्द उपयोग करके हिंदी से रूसी में और रूसी से हिंदी में अनुवाद करना, हिंदी की लोकोक्तियों और मुहावरों का इस्तेमाल करके वाक्य बनाना, नये शब्दों के समानार्थक और विपरीतार्थक शब्द लिखना, कहानी में शामिल शब्दों को उठाकर उनसे कोई दूसरी काल्पनिक घटना या कहानी बनाना, मुख्य पात्रों के चरित्र का वर्णन करना आदि।

हमारी खुशकिस्मती यह है कि हिंदी पढ़ाने में हमें सुशिक्षित भारतीय अध्यापकों की मदद मिलती है। हमारे भारतीय विभाग के अध्यापकों में एक हिंदुस्तानी कवि और अनुवादक हैं जो विद्यार्थियों से साहित्यिक आलोचना के विषयों पर बहुत दिलचस्प वाद-विवाद करवाते हैं। भारतीय राजदूतावास की बहुत अनुभवी अध्यापिका दिलचस्प सवाल तैयार करके हमारे विद्यार्थियों को पढ़ाने आती हैं। हम सब भरसक प्रयत्न करते हैं कि विद्यार्थी कुछ सीख के यांत्रिक तौर पर न दोहराएँ लेकिन प्राप्त ज्ञान को रचनात्मक तरीके से इस्तेमाल करें। इसलिए हम विद्यार्थियों को अपने विचार व्यक्त करने के लिए प्रोत्साहित करते हैं।

कभी-कभी उनके विचार भारतीय अध्यापकों के विचारों से अलग होते हैं। मिसाल के तौर पर कुछ लम्हें पहले अमरकांत की लिखी 'पलाश के फूल' नामक कहानी पर वाद-विवाद हुआ। 'पलाश के फूल' किसका प्रतीक है? हमारे विद्यार्थी बोलते थे कि जिस प्रकार पलाश के फूलों में कोई खुशबू नहीं है उसी प्रकार मुख्य पात्र की जिंदगी में कोई मतलब नहीं है, कोई खुशी नहीं है क्योंकि उसने अपने प्यार के प्रति गद्दारी की। भारतीय साहित्यिक आलोचना के सिद्धांतों से परिचित हिंदुस्तानी अध्यापक इस सवाल के अलग जवाब देते हैं। उनके विचार में पलाश के फूलों का लाल रंग - यह शोषित पीड़ित लोगों की आंखों में क्रोध का रंग है, क्रांति के फहराते हुए लाल झंडों का रंग है। अब विद्यार्थी सोच रहे हैं कि लेखक को चिट्ठी लिख कर पूछेंगे कि किसका विचार सही है।

तीसरे और चौथे साल के छात्र ललित साहित्य ही नहीं, भारत की सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक समस्याओं से संबंधित विभिन्न अखबारों और पत्रिकाओं में छपे लेख भी पढ़ते हैं और पढ़कर ताजी खबरों और आधुनिकतम सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक समस्याओं पर बहस छेड़ते हैं। जो शब्द अखबारों, पत्रिकाओं और टी.वी. के समाचारों में मिलता है वही शब्द वे बातचीत में प्रयोग करते हैं। उदाहरण के तौर पर अगर किसी छात्र को लेख पढ़ते समय मुद्रास्फीति जैसा शब्द मिला तो हिंदुस्तानी दोस्तों से बाते करते समय inflation के लिए वही शब्द इस्तेमाल करता है। फिर कुछ दोस्त बोलते हैं : वाह! तुम्हारी हिंदी कितनी अच्छी है। कितनी शुद्ध है। और बेचारा छात्र एकदम समझता है कि इस तारीफ में व्यंग्य है। दूसरा हिंदुस्तानी दोस्त सीधे बोलेगा : तुम्हारी हिंदी किताबी है। हम लोग ऐसा नहीं बोलते।

नाराज विद्यार्थी अध्यापकों के पास आकर पूछते हैं : आपने हमको क्यों ऐसी हिंदी सिखायी, जिसको सुनकर लोग हँसते हैं? वैसे छात्र पहले से जानते हैं कि भारतीय भाषाओं में diglossia का मतलब क्या है। हम शुरू से ही उनको समझाते हैं कि जो भाषा टी.वी. के समाचारों में प्रयोग की जाती है और जो भाषा आम लोग, उसी विषय पर बात करते हुए इस्तेमाल करते हैं उन दो भाषाओं में जमीन आसमान का फर्क होता है। लेकिन एक बात कुछ सैद्धांतिक रूप से जानना और दूसरी बात प्रयोग करना। हम रूसियों के लिए diglossic situation के आदी होना इसलिए कठिन है कि रूसी भाषा में अगर कोई पारिभाषिक शब्द का

प्रयोग किया जाता हे तो हर हालत में उसी शब्द का प्रयोग किया जाएगा। उदाहरण के लिए अगर अनुसूचित जातियाँ और जनजातियाँ जैसा पारिभाषिक शब्द भाषा में मौजूद है तो वह हर परिस्थिति में उपयोग किया जाएगा, चाहे विश्वविद्यालय के व्याख्यान में हो या दोस्तों की पार्टी में हो।

diglossic situation में परिस्थितियों के अनुकूल ठीक जबान चुनने के लिए हम अभ्यास कराने की कोशिशें कर रहे हैं। उदाहरण के तौर पर विद्यार्थी को कोई आर्थिक या सामाजिक विषय दिया जाता है जिस पर पहले वैज्ञानिक कांफ्रेंस में पेपर पढ़ना चाहिए और इसके बाद अपने दोस्तों से चाय पीते हुए उसी विषय पर बातें करना चाहिए। ऐसे अभ्यास विद्यार्थियों को दिलचस्प लगते हैं, लेकिन उनका ज्यादा फायदा है या नुकसान - यह विवादग्रस्त प्रश्न है। हिंदुस्तानी अध्यापक ऐसे अभ्यासों के विरुद्ध हैं। उनका ख्याल है कि शुद्ध हिंदी ही सिखानी-सीखनी चाहिए। शायद उनके तर्कों में विवेक का अंश है। सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक समस्याओं पर अनौपचारिक बातचीत में जिस किस्म की भाषा इस्तेमाल की जाती है, विद्यार्थियों के लिए तो क्या, अध्यापकों के लिए भी इसकी नकल करना मुश्किल है। इसलिए विद्यार्थी अनौपचारिक बातचीत करने की कोशिश करते समय विशेषणों और सहायक क्रियाओं को छोड़कर बाकी सारे अंग्रेजी शब्द इस्तेमाल करते हैं। ऐसी टूटी-फूटी जबान का अभ्यास करने से सिर्फ नुकसान पहुँच सकता है। हिंदुस्तानी अध्यापकों की यह बात मानकर हमने फैसला किया कि भविष्य में गम्भीर विषयों पर अनौपचारिक बातचीत करने के अभ्यास न्यूनतम मात्रा में करेंगे और विद्यार्थियों की भाषा किताबी न रहने देने के लिए दूसरे तरीके ढूढ़ने की कोशिश करेंगे।

विद्यार्थी खुद भी क्लास के बाहर सही बोलचाल की भाषा सीखने में प्रयत्न कर रहे हैं। आज-कल इसके बहुत मौके मिलते हैं। भारतीय मित्रों से मिल कर बात करो, फिल्में देखो, इन्टर्नेट में हर किस्म की सूचना पढ़ो आदि। सिर्फ एक चीज की कमी है - हिंदी सीख कर अपना ज्ञान इस्तेमाल करने के मौके सीमित हैं। इसलिए विद्यार्थी और उनके अध्यापक सपने देखा करते हैं कि भारत में हिंदी के बिना कोई काम न चले और रूसी विद्यार्थियों को हर क्षेत्र में हिंदी का उपयोग करने का मौका मिले।

# हिन्दी के अध्यापन की विधियाँ – शब्दावली और शब्दरचना

– येकातेरीना पानिना, मॉस्को, रूस

लोमोनोसोव मॉस्को विश्वविद्यालय में हिन्दी के अध्ययन का इतिहास बहुत लंबा है। विश्वविद्यालय में पूर्वी भाषाओं के अनुवादकों की तैयारी की जाती है परन्तु हमारे संस्थान के अलावा विश्वविद्यालय के भाषाविज्ञान विभाग में भी हिन्दी का अध्ययन किया जा रहा है। तुलनात्मक भाषाविज्ञान की विशेषताओं और मर्यादाओं के भीतर आज मैं हिन्दी की विधियों और सिखाने की कई समस्याओं के विषय में बात करना चाहती हूँ।

सीखने के पहले साल के दौरान विद्यार्थी वर्णमाला, देवनागरी लिपि और व्याकरण के प्राथमिक भाग से परिचित हो जाते हैं। इसमें हैं - वर्तमानकाल, भूतकाल और भविष्यकाल, परसर्ग, क्रियाविशेषण कृदंत, कर्मवाच्य इत्यादि। पहला साल पूरा करने पर विद्यार्थी दैनिक जीवन के विषय पर चर्चा कर सकते हैं - घर-परिवार, शौक, यात्रा के बारे में विचार-विमर्श कर सकते हैं, उन्हें भारतीय संस्कृति की कुछ जानकारी भी मिल जाती है। व्याकरण के पाठ्यक्रम के साथ-साथ उन्हें हिन्दीभाषी कवियों और अनुवादकों द्वारा पढ़ाया जाता है।

दूसरे साल के दौरान व्याकरण का अध्ययन जारी रहता है लेकिन साथ ही विद्यार्थी, हिन्दी के दूसरे प्रकार के साहित्य (जासूसी कहानी) पढ़ना और हिन्दी फिल्में देखना शुरू करते हैं। मैं बता दूँ कि शैक्षिक पाठ के रूप में जासूसी कहानी क्यों चुनी गयी?

सरल मनोरंजक कथावस्तु, पात्रों की भावपूर्णता, उन शब्दों की बड़ी संख्या जिनका प्रयोग दैनिक जीवन में किया जाता है, इस प्रकार के साहित्य की विशिष्ठता है जिसके कारण विद्यार्थियों को ऊबने का मौका नहीं मिलता। काम तो इस तरह चलता है - पाठ के एक हिस्से को पढ़ने और अनुवाद करने के पश्चात् उन शब्दों के नीचे लकीर खींची जाती है जिनको याद करने की जरूरत है। उपकथा के विचार विनिमय करने के बाद रूसी से हिन्दी में उन वाक्यों का अनुवाद किया जाता है

जिनमें नये शब्द शामिल हैं। शाब्दिक श्रुतिलेख, पर्याय सीखने से संबंधित काम अभ्यास का अखंड अंग है। पाठ के पढ़े हुए भागों का वापस अनुवाद भी करना जरूरी है। इन विद्यार्थियों को विशेष मुहावरे और शब्दों से संदर्भ का उपयोग कंठस्थ करने में मदद करता है।

फिल्म के समान कार्य, शब्दों और उनके स्वनन के रूपों को पहचानने में मदद करता है जो रूसीभाषियों के लिए एक विकट समस्या है। प्रारंभिक अवधि में बोलचाल की भाषा का सामना करके विद्यार्थी अक्सर उधेड़बुन में पड़ जाते हैं क्योंकि शब्दों की झड़ी को विभाजित नहीं कर पाते। 'वह आ रहा है', 'मैं कर रही हूँ' जैसे सामान्य वाक्य भी उनके लिए अलंघनीय बाधा लगती है। फिल्म को सुनकर और दोहराकर विद्यार्थी वाक्यों को लिखकर इन्हें ज्ञान की परीक्षा के लिए तैयार करते हैं। शुरू में अध्यापक को सुनने से पहले ही उन्हें नये शब्द समझाये जाते हैं जिससे कुछ समय बाद वे स्वयं अपने काम को करने में सक्षम हो जाते हैं। नया शब्द सुनकर वे खुद उसे शब्दकोश में ढूढ़ने की कोशिश करते हैं। उनके लिए कोई भी शब्द अस्पष्ट नहीं रहता।

यह सब विद्यार्थियों को शुद्ध व्याकरण से, भाषा की ऊँची शैली से ही नहीं बल्कि जीवित बोलचाल की भाषा से भी अवगत कराता है। मगर फिल्मों का चुनाव करते समय खासकर यही ध्यान में रखने की जरूरत है कि फिल्म में किस तरह की शब्दावली प्रयुक्त है। आदर्श के रूप में अंग्रेजी शब्दों से भरी फिल्मों का मेल बैठाना अच्छा होता है। ऐतिहासिक फिल्में हमें इतिहास का ज्ञान कराती हैं जबकि अन्य फिल्में हमें केन्द्रीय प्रदेशों और विशाल नगरों में भाषा की आधुनिक स्थिति की जानकारी देती हैं।

हिन्दी पढ़ाते समय सीखे हुए शब्दों के सिलसिले में शब्दरचना से अधिक गहरा परिचय कराने के बारे में बोलने की जरूरत है। बात यह है कि पढ़ाई के दौरान इस तरह के प्रश्न उत्पन्न हो जाते हैं कि फलाँने शब्द के क्या रूपग्राम होते हैं? या ये उत्पादक प्रत्यय हैं कि नहीं? वे हिन्दी शब्दावली के किस भाग में सम्मिलित होते हैं? संस्कृत, अरबी, फारसी, उनके संयोजन की क्या योग्यता है? यह बात टालने की कोई संभावना नहीं है। उलटे, इस विषय का अध्ययन बहुत लाभदायक होता है। उपसर्गों, समस्त शब्दों से परिचय करके विद्यार्थी विभिन्न

शब्दरचना की विधियों की सहायता से नये शब्द बनाकर अभ्यास करते रहते हैं।

अगर जरूरत पड़ती है तो धातु या परप्रत्यय के निश्चित अर्थ की जानकारी देकर यह उनको ऐसा सही शब्द बनाने का अवसर देता है जिससे वे पहले अनभिज्ञ थे। संस्कृत उपसर्गों को मालूम करके वे शब्दकोश के बिना उपसर्गीय शब्द का अनुवाद कर पाते हैं। इस तरह एक ओर इस विषय में दूर तक जाने की आवश्यकता विद्यार्थी स्वयं निकाल लेते हैं और दूसरी ओर यह भाषा के सारांश से निकल आती है।

इसी संबंध में विद्यार्थियों के संस्कृत सीखने के लाभ के विषय पर कुछ कहा जा सकता है। हम उन छात्रों के बारे में बात करते हैं जो भाषाविज्ञान या साहित्य विज्ञान के क्षेत्र में ही नहीं, इतिहास और अर्थशास्त्र के क्षेत्र में भी विशेष प्रशिक्षण पाते हैं। संस्कृत संधि के नियमों, समस्त शब्दों के प्रकार, शब्दरचना की विधियों, पर्याय और बोली की विभिन्न शैलियों में विभेद करने का ज्ञान देती है। विद्यार्थी को मालूम हो जाता है कि संस्कृत शब्द का प्रयोग किस संदर्भ में उचित होगा। यह भी हो सकता है कि संस्कृत शब्द के बदले अंग्रेजी, अरबी या फारसी शब्द का इस्तेमाल करना ज्यादा अच्छा हो।

शब्दरचना से परिचय की मर्यादाओं के भीतर एक अलग विषय है - संस्कृत के नये शब्द जो संस्कृत के रूपग्रामों और संस्कृत की शब्दरचना के नियमों पर आधारित हैं, लेकिन संस्कृत में शामिल नहीं होते। तो विद्यार्थी क्या करें? वे उन शब्दों का इस्तेमाल करें जो दूसरे लफजों के मुकाबले कदाचित् प्रयुक्त होते हैं और जो हर किसी स्थिति में प्रयुक्त नहीं हो सकते या अनुकूल अंग्रेजी शब्द जो पाठ की शैली पर अपना प्रभाव जरूर डालेंगे, क्या इन कठिन शब्दों को सीखने के लिए समय व्यतीत करना उचित है जबकि ऐसे शब्द दैनिक जीवन में बहुत कम आते हैं?

फिर भी यह जरूरी है कि इस तरह के शब्दों से विद्यार्थियों को परिचित होना ही चाहिए।

हम एक और समस्या का जिक्र करेंगे - पाठ्यपुस्तकों की। आजकल अध्यापन न केवल फिल्मों, अखबारों और साहित्यिक कृतियों के आधार पर बल्कि

अंग्रेजी में लिखी हुई हिन्दी की पाठ्यपुस्तक के आधार पर किया जा रहा है। इसका नाम है – 'टीच योरसेल्फ हिन्दी'। इस किताब के गुणों के विषय पर ज्यादा बताया जा सकता है। लेकिन वास्तविकता यह है कि अभी तक रूसी भाषा में इस पुस्तक के समान इतनी अच्छी कोई दूसरी किताब नहीं है। जो पाठ्यपुस्तकें रूसी में लिखी जा रही हैं उनमें अधिकतर न दिलचस्प पाठ और न जरूरी शब्दावली सम्मिलित है। अक्सर वहाँ के पाठ, अप्रचलित शब्दावली के साथ बहुत जटिल या उबाऊ होते हैं। यह समस्या न सिर्फ विश्वविद्यालयों की है परन्तु उस स्कूल की भी है जहाँ बच्चों को विदेशी भाषा के रूप में हिन्दी पढ़ाई जाती है। इसलिए मौजूदा हालत में समस्या तो स्पष्ट है। हमें इस तरह की पाठ्यपुस्तक लिखनी है जिसको निम्नलिखित माँगों के अनुकूल होना चाहिए। वे हैं –

1- संवादों और पाठों में रोचक कथावस्तु। वांछनीय है अगर राष्ट्रीय मौलिकता भी इसमें शामिल हो,

2- सांस्कृतिक विषय पर आधारित पाठ जो भारत की संस्कृति और परंपराओं से परिचय के लिए आवश्यक है

3- रूसी से हिन्दी में अनुवाद करने के लिए अभ्यासों की बड़ी संख्या

4- विद्यार्थियों की जरूरतों को देखते हुए व्याकरण सम्बन्धी टिप्पणी

5- हर एक पाठ की न्यूनतम शब्दावली

6- बोलने के लिए ऐसे विषय जिनकी सहायता से विद्यार्थी स्वतंत्र रूप से काम कर सकें। हमें आशा है कि इस प्रकार की पाठ्यपुस्तक हमारे साथ जल्द ही लगेगी।

# हिंदी शिक्षण एवं प्रशिक्षण में समस्याएँ – चुनौतियाँ एवं समाधान

डॉ. वंदना मुकेश

हिंदी विश्व में सर्वाधिक बोली जाने वाली भाषाओं में से एक है। विश्व के अनेक देशों में सैकड़ों छोटे-बड़े केंद्रों एवं लगभग 150 विश्वविद्यालयों में प्राथमिक स्तर से लेकर शोध स्तर तक हिंदी के अध्ययन-अध्यापन की व्यवस्था है। विदेशों से लगभग 25 से अधिक पत्र-पत्रिकाएँ नियमित रूप से हिंदी में प्रकाशित हो रही हैं। कई देशों से रेडियो पर हिंदी कार्यक्रमों का प्रसारण किया जा रहा है।

किंतु फिर भी हिंदी-शिक्षण एवं प्रशिक्षण का मार्ग प्रश्नों और अनेक चुनौतियों से भरा है। इस प्रपत्र में इंग्लैंड में हिंदी के शिक्षण और उससे जुड़ी समस्याओं पर एक विहंगम दृष्टि से अवलोकन करते हुए समाधानों पर विचार किया जायेगा। संभव है कि विश्व-स्तर पर हिंदी शिक्षकों द्वारा इन समस्याओं को अनुभूत किया जा रहा हो।

इंग्लैंड में हिंदू मंदिरों की भूमिका हिंदी भाषा के प्रचार-प्रसार में अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। ऐसा कहा जा सकता है कि मंदिर भाषा के प्रचार-प्रसार का प्रमुख केंद्र हैं। यह वह स्थान है जहाँ अक्सर भारतीयता और भक्ति-भावना से ओत-प्रोत भारतीय इकट्ठा होते हैं। इंग्लैड में अनेक मंदिरों में हिंदी भाषा की शिक्षा दी जाती है। लंदन के अनेक मंदिरों के अतिरिक्त, बरमिंघम में श्री गीता भवन, दुर्गा मंदिर, वोलेवरहेंप्टन में श्रीराम मंदिर, श्रीकृष्ण मंदिर, नौटिंघम में कला निकेतन आदि अनेक मंदिरों में हिंदी भाषा की साप्ताहिक कक्षाएँ नियमित रूप से चल रही हैं। कार्डिफ़, बेलफ़ास्ट, आदि अनेक नगरों में धार्मिक एवं सामाजिक संस्थाओं के द्वारा हिंदी शिक्षण की सुविधा उपलब्ध करवाई जा रही है। अनेक स्वयंसेवी शिक्षक व्यक्तिगत स्तर पर भी हिंदी शिक्षण का कार्य कर रहे हैं। वे प्रयत्नपूर्वक अपने बच्चों को घरों में हिंदी पढ़ा रहे हैं।

हिंदी की लोकप्रियता बढ़ाने और शिक्षण में हिंदी फिल्मों का योगदान विलक्षण

है। विदेशों में बसा भारतीय समाज हिंदी फिल्मों का दीवाना है। सिनेमा हॉल के बाहर विभिन्न भाषा-भाषी सच्चे अर्थों में भारतीयता का संवहन करते हैं। किंतु दुख की बात यह है कि भारतीय फिल्म उद्‌योग-बॉलीवुड की फ़िल्मों में अब हिंदी कम अंग्रेजी ज्यादा, या यों कहें कि हिंदी-अंग्रेजी के मिले-जुले स्वरूप, हिंग्लिश का प्रयोग अधिक हो रहा है। आज विदेशों में दूसरी और तीसरी पीढ़ी के भारतीयों एवं पाकिस्तानियों के बीच हिंदी फ़िल्में बहुत लोकप्रिय हैं। विभिन्न भारतीय टी वी चैनलों ने भी हिंदी की लोकप्रियता में वृद्धि की है। इस प्रकार दृश्य एवं श्रव्य माध्यम हिंदी (हिंग्लिश) शिक्षण कर रहा है।

कैम्ब्रिज, ऑक्सफ़र्ड एवं लंदन यूनिवर्सिटी द्‌वारा स्नातक स्तर पर भारतीय संस्कृति विभाग के अंतर्गत एक ऐच्छिक विषय के रूप में हिंदी का अध्यापन किया जा रहा है।

कोई भी भाषा पढ़ाना एक चुनौतीपूर्ण कार्य है। देश में हो या विदेश में, यह चुनौती तब दोगुनी हो जाती है जब उस भाषा के सीखने पर उसे व्यवहार में लाने के अवसर न के बराबर हों। हम सभी जानते हैं कि भाषा मात्र संवाद या संप्रेषण का माध्यम नहीं अपितु भाषा उस समाज की, उस संस्कृति की संवाहक होती है जिसमें उसका व्यवहार होता है। अतः परिवेश से कट कर भाषाशिक्षण निश्चित ही एक चुनौतीपूर्ण कार्य है। सबसे पहले तो यह देखना होगा कि वे कौन लोग हैं जो हिंदी भाषा का अध्ययन करना चाहते हैं।

मोटे तौर पर हिंदी के अध्येताओं को दो वर्गों में विभाजित किया जा सकता है।

1. बच्चे 2 वयस्क

इन्हें भी दो वर्गों में विभाजित किया जा सकता है।

1) वे लोग, जिनकी मातृभाषा अथवा प्रथम भाषा हिंदी नहीं है और वे हिंदी एक नयी भाषा के रूप में सीखना चाहते हैं।

2) वे लोग जिनकी मातृभाषा तो हिंदी है लेकिन प्रथम भाषा नहीं, अतः स्वयं बोल, लिख पढ़ नहीं सकते, थोड़ा बहुत समझ लेते हैं। उदाहरणार्थ-ब्रिटिश भारतीय।

इन वर्गों को पुनः तीन उपवर्गों में विभाजित किया जा सकता है-

1. नौकरी के कारण निश्चित कार्यकाल के लिए भारत से विदेशों में आये हिंदी भाषी परिवारों के बच्चे।

2.विदेशों से भारत में निश्चित कार्यकाल के लिए भेजे जानेवाले कर्मचारी।

3. व्यक्तिगत रुचि के कारण-इस उपवर्ग को पुनः पाँच उपवर्गों में विभाजित किया जा सकता है-

1- भाषा सीखने की सहज जिज्ञासा

2- हिंदी फ़िल्में

3- भारतीय संस्कृति एवं साहित्य के प्रति आकर्षण

4- विश्वविद्यालय स्तर पर ऐच्छिक विषय के रूप में हिंदी का अध्ययन

5- पर्यटन के लिए हिंदी

**समस्याएँ** : जितनी विविधता और विस्तार हिंदी के अध्येताओं की है, हिंदी-शिक्षण की समस्याएँ भी उतनी ही अधिक हैं। कुछ पर दृष्टिपात किया जा सकता है-

1) उचित और मानक पाठ्यक्रम का अभाव-

एक मानक पाठ्यक्रम के अभाव में हिंदी का शिक्षण किसी योजनावद्ध रूप में नहीं हो पाता। उचित मार्गदर्शन के अभाव में शिक्षक हिंदी के अपने ज्ञान और समझ के अनुरूप कामचलाऊ पाठ्यक्रम के आधार पर हिंदी अध्यापन का कार्य करते हैं। इस विषय में प्रोफेसर महावीर सरन जैन का कहना है कि हिन्दी शिक्षण के पाठ्यक्रम का निर्माण प्रत्येक देश के शिक्षण स्तर एवं हिन्दी प्रशिक्षण के लक्ष्यों एवं उद्देश्यों को ध्यान में रखकर करना चाहिए। पाठ्यक्रम इतना व्यापक एवं स्पष्ट होना चाहिए जिससे शिक्षक एवं अध्येता का मार्गदर्शन हो सके।

2) हिन्दी के मानक रूप का अभाव -

यह एक ऐसी समस्या है जिसका निवारण उचित प्रशिक्षण के द्वारा ही किया जा सकता है। उच्चारण, वर्तनी, लेखन, रूप-रचना, वाक्य-गठन और अर्थ आदि के स्तर पर अनेक तरह के प्रयोग मिलते हैं। हालाँकि सूचना प्रौद्योगिकी

एवं यूनिकोड के आगमन से इस समस्या का कुछ हल तो निकला है। लेकिन इस दिशा में अभी बहुत काम होना बाकी है।

3) प्रशिक्षित शिक्षकों को अभाव -

प्रत्येक भाषा का अपना विशिष्ट स्वरूप, व्याकरण, ध्वनियाँ इत्यादि होती हैं, एक शिक्षक को उस भाषा विशेष के इन पक्षों का ज्ञान होना आवश्यक है। अंग्रेजी भाषा पढ़ाने के लिए CELTA, TESOL का प्रशिक्षण अनिवार्य है। जबकि हिंदी भाषा पढ़ाने के लिए किसी प्रशिक्षण की आवश्यकता ही नहीं समझी जाती। हिंदी भाषा को बोलने-समझनेवाले लोग अपने हिंदी प्रेम के कारण हिंदी शिक्षण का कार्य कर रहे हैं। और प्रशिक्षण का प्रश्न उठाना व्यक्तिगत आक्षेप के रूप में भी लिया जा सकता है। अतः आवश्यक है कि विदेशों में हिंदी शिक्षण करने वाले शिक्षकों के लिए शिक्षण-प्रशिक्षण एवं नये पाठ्यक्रमों का आयोजन एवं संचालन होना चाहिए।

यहाँ यह उल्लेख करना उचित होगा कि, यॉर्क विश्वविद्यालय के प्रोफेसर श्री महेंद्र किशोर वर्मा, श्रीमती उषा वर्मा एवं श्री अमरीक कलसी के द्वारा नौवें दशक के उत्तरार्द्ध में भारतीय भाषा-शिक्षण हेतु एक प्रशिक्षण शिविर आरंभ किया गया। पाँच भारतीय भाषाओं के शिक्षण के लिए यह चार दिवसीय ईस्टर प्रशिक्षण शिविर 10 वर्षों तक निरंतर चलता रहा। इसके अंतर्गत शिक्षकों को हिंदी, उर्दू, पंजाबी, गुजराती एवं बंगाली भाषाएँ सिखाने के लिए प्रशिक्षित किया गया। यह वे भाषाएँ थीं, जिन्हें राष्ट्रीय पाठ्यक्रम के अंतर्गत सम्मिलित किया गया था। इस शिविर में मातृभाषा प्रशिक्षण हेतु शिक्षण सामग्री तैयार करना भी सिखाया गया। उसी दौरान नॉटिंघम में हिंदी प्रशिक्षण शिविर आयोजित किया गया। इन प्रशिक्षण शिविरों के माध्यम से ब्रिटेन में भारतीय भाषाएँ पढ़ानेवाले अनेक शिक्षक लाभान्वित हुए। आज फिर इस बात की गहन आवश्यकता महसूस की जा रही है कि कोई हिंदी शिक्षण-प्रशिक्षण कार्यक्रम या शिविर आयोजित किया जाय।

4) उचित संसाधनों का अभाव एवं स्वाध्याय के लिए उचित पुस्तकों का अभाव

किसी भी भाषा से अधिकाधिक परिचित होने के लिए आवश्यक है कि उस भाषा में प्रत्येक पाठक को साहित्य पढ़ने के अवसर प्राप्त हों, उचित पाठ्य-पुस्तकें, स्वाध्याय के लिए पुस्तकें आदि उपलब्ध हों। प्राथमिक स्तर की कुछ पाठ्य-पुस्तकें

भी प्रकाशित हुई हैं, जिनमें रूपर्ट स्नेल की टीच योरसेल्फ हिंदी, वेदप्रकाश मोहला की पुस्तकें, नागरा की बिगिनर्स हिंदी इत्यादि हैं और इनका उपयोग शिक्षकों द्वारा ऐच्छिक रूप से किया जाता है। संभव है कि बहुत से शिक्षकों को इन पुस्तकों के विषय में जानकारी न हो, अथवा वे भारत में पढ़ाई जानेवाली पाठ्य पुस्तकों का ही आधार लेते हों। जो यहाँ के वातावरण के लिए उचित नहीं है।

5) व्याकरण–

किसी भी भाषा अध्ययन के लिए उस भाषा के विविध अवयवों का ज्ञान, उनका विवेचन-विश्लेषण करते हुए उनके प्रयोग के नियमों को आत्मसात् करना बहुत आवश्यक है। भाषा को शुद्ध रूप से बोलना, पढ़ना और शुद्ध लिखने का ज्ञान ही व्याकरण है। वर्ण, शब्द एवं वाक्य भाषा के महत्वपूर्ण भाग हैं। हिंदी-शिक्षकों में व्याकरण का अपर्याप्त ज्ञान भाषा शिक्षण-प्रशिक्षण में अवरोध उत्पन्न करता है। विशिष्ट ध्वनियों का उच्चारण-प्रशिक्षण भी एक महत्वपूर्ण भाग है जो निरंतर अभ्यास से ही अर्जित किया जा सकता है।

6) भाषा के अभ्यास के लिए उचित वातावरण का उपलब्ध न हो पाना–

किसी भाषा विशेष का व्यवहार एक विशिष्ट समाज में होता है। जब भाषा के व्यवहार के लिए उचित वातावरण का अभाव हो तो हिंदी क्या कोई भी भाषा सीखना बहुत कठिन हो जाता है। यहाँ माता-पिता भी अपने दायित्व का ठीक से निर्वाह नहीं कर रहे हैं। स्वार्थ और सुविधा के कारण अधिकांश माता-पिता इस दिशा में कोई प्रयास नहीं करते।

7) शिक्षकों और विद्यार्थियों को उचित बढ़ावा न मिलना –

यदि हम अपनी भाषा-संस्कृति जीवित रखना चाहते हैं तो प्रयास तो हमें स्वयं ही करना होगा। भारत सरकार को हिंदी के प्रचार-प्रसार करने वाले शिक्षकों एवं अध्येताओं को ऐसे पुरस्कार प्रोत्साहन देना चाहिए कि उससे अधिकाधिक लोग हिंदी भाषा सीखने के लिए प्रेरित हों।

8) ग़रीब की भाषा हिंदी, हिंदी के प्रति असम्मान की भावना–

अत्यंत क्षोभ और दुख के साथ कहना पड़ता है कि भारत में आज भी हिंदी गरीब और दीन की भाषा है। आज भी हम मानसिक गुलाम हैं। आज भी अंग्रेजी

की चमक से हमारी आँखे चौंधिया जाती हैं। कहीं न कहीं यह ग्रंथि है कि अंग्रेजी रौब की भाषा है, किसी पर प्रभाव डालना हो या आतंकित करना हो तो अंग्रेजी में बोलो। माँ -बाप इस बात में गर्व का अनुभव करते हैं कि मेरा बच्चा अंग्रेजों जैसी अंग्रेजी बोलता है, लेकिन उन्हें यह कहने में बिल्कुल शर्म महसूस नहीं होती कि मेरा बच्चा अपनी मातृभाषा नहीं बोल पाता। जिन अंग्रेजों से हम इतने प्रभावित हैं उनसे यह तो सीख पाते कि प्राथमिक शिक्षण मातृभाषा में हो फिर दूसरी भाषा का शिक्षण हो। इंग्लैंड में फ्रेंच, जर्मन या स्पेनिश का शिक्षण पाँचवीं-छठवीं कक्षा के बाद आरंभ होता है। काश, भारत में भी ऐसा ही होता। भारत की भाषायी विविधता एवं समृद्धि विलक्षण है। इसके बावजूद यदि हम अपनी भाषाओं का सम्मान करने में असमर्थ हैं तो इसके लिए भारत सरकार की दोषपूर्ण नीतियाँ हैं। भारत संसार का एकमात्र देश है जिसके पास अभिव्यक्ति के लिए स्वभाषा भी नहीं है। जब तक हम अपनी भाषा का सम्मान नहीं करेंगे, कोई और कैसे करेगा? समस्या की जड़ तो भारत में ही है। वर्तमान में हिंदी बोले जाने के आधार पर विश्व की प्रथम तीन भाषाओं में हिंदी आती है, लेकिन वर्तमान ह्रास को देखते हुए वह दिन दूर नहीं जब विश्व की विलुप्त भाषाओं में हिंदी का नाम भी होगा।

## समाधान

समाधानों की पड़ताल करते हुए संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि-

1. सर्वप्रथम, माता-पिता स्वयं हिंदी में बातचीत करें और बच्चों को हिंदी बोलने, पढ़ने और लिखने के लिए प्रेरित करें।

2. भारत और विदेशों में भारतीयों के बीच में संपर्क भाषा के रूप में हिंदी का व्यवहार हो।

3. भारत में प्राथमिक शिक्षण मातृभाषा में हो और हिंदी अनिवार्य विषय के रूप में पढ़ाई जाए।

4. विज्ञान एवं तकनीकी की जानकारी हिंदी में सर्वसुलभ हो एवं हिंदी में रोजगार के अवसर प्रदान किए जायँ।

5. विदेशों में साप्ताहिक, मासिक सामाजिक कार्यक्रमों, तीज त्यौहारों का विशेष रूप से आयोजन किया जाय।

6. विदेशों में हिंदी का एक राष्ट्रीय पाठ्यक्रम विकसित किया जाये। जिसमें यहाँ के शिक्षक भारतीय विद्वानों के मार्गदर्शन में पाठ्य पुस्तकें बना सकें, जिसमें यहाँ का परिवेश समाविष्ट हो।

7. अंग्रेज़ी की आई.एल.टी.एस. एवं टोफेल की परीक्षाओं की तरह भारत में नौकरी, प्रशिक्षण के लिए जानेवाले विदेशियों/प्रवासियों के लिए हिंदी भाषा ज्ञान की योग्यता परीक्षा अनिवार्य करनी चाहिए।

8. विदेशों में राष्ट्रीय पाठ्यक्रम में हिंदी का द्विवतीय भाषा के रूप में अध्ययन-अध्यापन होना चाहिए।

यहाँ यह उल्लेखनीय है कि हाल ही में कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय के अंतरराष्ट्रीय परीक्षा विभाग ने इंग्लैंड के सेकेंड्री स्कूलों में आई.जी.सी.एस.ई. की हिंदी परीक्षा को सम्मिलित किया है। जिसके माध्यम से हिंदी अध्येताओं को द्वितीय भाषा के रूप में हिंदी चयन करने की सुविधा प्रदान की गई है।

9. शिक्षकों के लिए हिंदी प्रशिक्षण की व्यवस्था की जानी चाहिए। समय-समय पर हिंदी प्रशिक्षण-नवीकरण कार्यक्रमों और शिविरों का आयोजन किया जाना चाहिए।

10. हिंदी-शिक्षकों को केंन्द्रीय हिंदी निदेशालय द्वारा प्रकाशित पुस्तिका-देवनागरी लिपि तथा हिंदी वर्तनी का मानकीकरण-का वितरण किया जाए।

11. श्रवण, वार्तालाप, वाचन, एवं लेखन कौशल के विकास के लिए विशेष अवसर प्रदान किये जाएँ।

12. विदेशों में वयस्क शिक्षा पाठ्यक्रम का निर्माण किया जाए- जिसके अंतर्गत दैनिक जीवन के विविध प्रयोजनों की सिद्धि के लिए हिन्दी भाषा की आधारभूत शब्दावली का निर्माण एवं आधारभूत व्याकरण के अनुप्रयोगात्मक पाठों का समावेश किया जाए।

13. भारत सरकार के विदेशों में हिंदी-शिक्षकों और विद्यार्थियों को प्रोत्साहित करने हेतु पुरस्कार एवं उचित मानधन की व्यवस्था करनी चाहिए।

14. हिंदी-शिक्षकों का त्रैमासिक, अर्द्ध-वार्षिक या वार्षिक सम्मेलन हो जिसमें हिंदी प्रशिक्षण कार्यशाला आयोजित हो एवं शिक्षकों को हिंदी के शिक्षाविदों से संवाद-परिसंवाद

के अवसर प्रदान किये जाएँ।

15. कैम्ब्रिज अथवा किसी विदेशी नाम के स्थान पर परीक्षाओं को भारतीय विश्वविद्यालय जैसे केन्द्रीय हिंदी संस्थान आगरा अथवा महात्मा गाँधी अंतरराष्ट्रीय मुक्त विद्यापीठ वर्धा द्वारा मान्यता प्रदान की जाए।

16. शिक्षण के समय आनेवाली समस्याओं का निराकरण स्वानुभव के आधार पर कुछ इस तरह किया जा सकता है।

- विद्यार्थियों के भाषाज्ञान का प्रारंभिक अवस्था में मूल्यांकन
- उनकी आवश्यकता के आधार पर पाठ्यक्रम निर्माण
- चित्रों, दृश्य वस्तुओं का प्रयोग
- अभिनय का प्रयोग
- खेल-पारस्परिक संवादात्मक स्थिति एवं अनुभव का निर्माण
- तकनीकी का प्रयोग जैसे स्मार्ट बोर्ड

संक्षेप में कहा जा सकता है कि हिंदी भाषा के औपचारिक शिक्षण-प्रशिक्षण के अतिरिक्त व्यक्तिगत स्तर पर किये जानेवाले प्रयास अत्यंत महत्वपूर्ण और हिंदी के पुनरुत्थान में मील का पत्थर सिद्ध होंगे। एक भारतीय होने को नाते हमें हिंदी में बात करने में गर्व की अनुभूति होनी चाहिए। स्वतंत्रता सेनानियों ने देश को स्वतंत्र करवाया अब हम पढ़े-लिखे भारतीयों का दायित्व है कि हम स्वयं को मानसिक गुलामी के बंधन से मुक्त करें। अंत में यही कहूँगी कि जिस प्रकार बूँद-बूँद से घड़ा भरता है उसी प्रकार एक-एक व्यक्ति के प्रयास से ही हिंदी अपना खोया सम्मान पा सकती है।

निज भाषा उन्नति अहै, सब उन्नति को मूल।
बिन निज भाषा ज्ञान के, मिटै न हिय को सूल।।

# हिन्दी शिक्षण एवं प्रशिक्षण में समस्याएँ : चुनौतियाँ एवं समाधान

– डॉ. श्रीराम परिहार, (डी.लिट. हिन्दी)

भाषा संस्कृति की धारक और संवाहक होती है। मनुष्य का जन्म एक सौभाग्य है। प्रकृति ने मनुष्य को अपार संभावनाओं और गुणों के साथ जन्म दिया है। प्रकृति ने मनुष्य को अनेक उपहार स्वभावतः दिये हैं। प्रकृति द्वारा मनुष्य को दिया जाने वाला सबसे सुन्दर और महत्वपूर्ण दाय है – वाणी, वाक्। वाक् या वाणी से भाषा बनी। संकेतों और ध्वनियों की गुफा से मनुष्य बाहर निकलकर आया। उसके अनुभवों और चिन्तन ने शब्दों में उतरना आरंभ किया। मनुष्य ने ध्वनि के लिपि-संकेत बनाये। लिपि बनी। वर्ण और वर्णमाला बनी। शब्द बने। वाक्यों की संरचना हुई। भाषा बनी। साहित्य बना। शास्त्र बना। सभ्यता और संस्कृति के सोपान मनुष्य चढ़ता चला गया। उसके संवादों में भाषा और शब्दों की अर्थवत्ता ने नये-नये क्षितिज खोले। वह भाषा को जन्म के समय से माँ के दूध के साथ पीने लगा। सुनने लगा। सीखने लगा। भाषा में वह रोने लगा। हँसने लगा। उसके सोच, अनुसंधान, स्वप्न, जागृति, अनुभूति और अभिव्यक्ति का माध्यम भाषा बन गयी। वह मनुष्य की मातृभाषा हो गयी। अक्षर, शब्द और भाषा के प्रकाश में मनुष्य ने अपनी जययात्रा आरंभ की। आचार्य दण्डी का कथन है –

इदमन्धंतमः कृत्स्नं जायेत भुवनत्रयम्।

यदि शब्दाह्वयं ज्योतिरासंसारं न दीप्यते।। (काव्यादर्श 1-4)

(यह त्रिभुवन घोर अन्धकार में निमग्न हो जाता, यदि सृष्टि के आरम्भ से शब्द (भाषा) की ज्योति न जलती होती)

आहार, निद्रा, भय, मैथुन ये चारों प्राणी मात्र में होते हैं : लेकिन मनुष्य में विवेक होता है। उसके पास वाणी और भाषा होती है। विवेक और भाषा ही मनुष्य को अन्य प्राणियों से भिन्न और श्रेष्ठ बनाती हैं। साहित्य, ज्ञान, विज्ञान, कला सभी क्षेत्रों में मनुष्य की उन्नति का आधार भाषा है। मनुष्य ने समाज

बनाया। समाज की व्यवस्था बनी। व्यवस्था के भीतर स्थित समाज-तंत्र के संचालन के लिए भाषा सर्व-स्वीकृत माध्यम हुई। नीतिशतक रचयिता महाकवि भर्तृहरि कहते हैं – 'अर्थप्रवृत्तितत्त्वनां शब्दा एव निबन्धनम्। (वाक्यपदीय) व्यवहार में प्रवृत्त होने के साधन शब्द ही हैं। जो भी लौकिक व्यवहार होता है, वह भाषा के द्वारा ही होता है। भाषा ने व्यक्तित्व के विकास, व्यक्ति-चेतना के विकास, समाज-निर्माण और उसके सुदृढ़ीकरण, सांस्कृतिक सन्दर्भों के विस्तार, समृद्धि और अभिव्यक्ति में महती भूमिका निभायी है।

## हिन्दी की प्रकृति

हिन्दी आर्यभाषा परिवार की भाषा है। भारतवर्ष की सबसे प्राचीन भाषा संस्कृत है। संस्कृत को देववाणी भी कहा जाता है। भारतवर्ष के प्राचीनतम समृद्ध ग्रंथों की रचना संस्कृत में हुई। भाषा निरंतर गतिशील और प्रवाहमयी होती है। उसके रूप-स्वरूप में समयानुसार परिवर्तन होता रहता है। यह परिवर्तन नयी भाषाओं को जन्म देता है। आर्य परिवार की भाषा संस्कृत से ही हिन्दी का जन्म हुआ है। संस्कृत से पालि, पालि से प्राकृत, प्राकृत से अपभ्रंश और अपभ्रंश से हिन्दी का जन्म हुआ है। भारतीय भाषाओं की उत्पत्ति के सम्बन्ध में अलग-अलग विद्वानों ने अपने-अपने मत प्रकट किये हैं। इस क्षेत्र में डॉ. ग्रियर्सन का नाम शिखर पर है। भाषाओं के गहन अध्ययन के पश्चात् आप पहले व्यक्ति बने जिन्होंने भारत की समस्त भाषाओं का वैज्ञानिक ढंग से सर्वेक्षण करके अपनी रिपोर्ट 'लिंग्विस्टिक सर्वे आफ इंडिया' नामक पुस्तक में प्रस्तुत की।

डॉ. ग्रियर्सन की पुस्तक 'लिंग्विस्टिक सर्वे आफ इंडिया' के आधार के बाद डॉ. सुनीति कुमार चटर्जी, डॉ. श्यामसुन्दर दास, डॉ. उदयनारायण तिवारी, डॉ. धीरेन्द्र वर्मा डॉ. बाबूराम सक्सेना आदि विद्वानों ने अपने-अपने ढंग से भाषा-विकास पर कार्य करके जो निष्कर्ष प्रस्तुत किये हैं, उन निष्कर्षों के अनुसार वैदिक संस्कृत से हिन्दी तक का विकास-क्रम स्पष्ट होता है। हिन्दी की उत्पत्ति का अपना इतिहास है। हिन्दी की अन्तर-प्रान्तीय बोलियों से बना हिन्दी का अपना बड़ा और समृद्ध कुल-कुटम्ब है। भारतीय भाषाओं की जननी संस्कृत है। समस्त भारतीय भाषाओं की हिन्दी सगी बड़ी बहन है। हिन्दी भारतीय संविधान में

राजभाषा के रूप में स्वीकार की गयी है, लेकिन यह राष्ट्रभाषा और विश्वभाषा बनने की अधिकारिणी है।

हिन्दी के पास जनभाषा होने का सांस्कृतिक आधार है। जनाधार और मिट्टी की गंध उसे राष्ट्रभाषा बनने की गुणवत्ता प्रदान करती है। राष्ट्र की मिट्टी की गंध उसकी संस्कृति में समाहित होती है। संस्कृति-सभ्यता से संदर्भित संस्कार तथा आचार-व्यवहार में वह प्रयुक्त भी होती है। भारत जैसे महादेश की सांस्कृतिक भाव-सम्पदा के संयत स्वरों में गाने की क्षमता हिन्दी के पास है। हिन्दी की सम्पन्न साहित्य-निधि है। हिन्दी के पास अपना विशाल शब्द-भण्डार है। हिन्दी भाषा के पास लगभग सात लाख शब्द हैं। हिन्दी के पास नये शब्द गढ़ने का कौशल है। इसके पास नये शब्दों को आत्मसात् करने की अद्भुत क्षमता है। यह विशेषता और क्षमता भारतीय संस्कृति की भी है। उसमें नये को स्वीकार करने का भाव है। अतः भारतीय संस्कृति और हिन्दी भाषा दोनों ही जीवन्त हैं। जीवन्तता जनभाषा का वैशिष्ट्य है। जीवन्त भाषा ही जीवन्त संस्कृति को उसके बहुविध स्वरूप संयोजन के साथ जीवन्त अभिव्यक्ति दे सकती है। किसी राष्ट्र का उत्थान और पराभव उसकी संस्कृति के उत्थान-पतन से गहरा जुड़ा होता है। संस्कृति के अवसान का एक कारण उस राष्ट्र की भाषा का अवसान भी होता है। इसलिए निज भाषा उन्नति संस्कृति की उन्नति तथा राष्ट्र की उन्नति का मूल है। बाबू हरिश्चन्द्र की उक्ति है –

> निज भाषा उन्नति अहै, सब उन्नति को मूल।
> बिन निज भाषा ज्ञान के, मिटत न हिय को शूल।।

## हिन्दी का व्यापकत्व

हिन्दी का विकास विश्व स्तर पर हो रहा है। आज पूरे विश्व में लगभग एक अरब से भी अधिक लोग हिन्दी बोलते हैं और हिन्दी में व्यवहार करते हैं। विश्व के लगभग 162 विश्वविद्यालयों में हिन्दी का अध्ययन-अध्यापन हो रहा है। अतः हिन्दी के शिक्षण-प्रशिक्षण की आज अधिक आवश्यकता है। भारत बहुभाषी देश है। हिन्दी शिक्षण-प्रशिक्षण की जरूरत, भारत और भारत से बाहर ज्ञान-विज्ञान के प्रसार और अनुसंधान की दृष्टि से अधिक अनुभव की जा रही है। हिन्दी की

अपनी देवनागरी लिपि है। वर्णमाला है। शब्द-रचना है। वाक्य-रचना है। उसका अपना व्याकरण है। अतः उसका अपना निजी और स्वतंत्र व्यक्तित्व है। वह बोलने में सरल है। वह सुनने में मधुर है। वह सीखने में आसान है। वह जैसी बोली जाती है, वैसी ही लिखी जाती है। उसका अपना ध्वनि-विज्ञान है। उसकी अपनी उच्चारण-प्रक्रिया है, जो कण्ठ के अलग-अलग भागों से स्पर्श-सहयोग पाकर पूर्णतः वैज्ञानिक ढंग से स्फुरित होती है।

विश्वकवि रवीन्द्रनाथ ठाकुर भारतीय भाषाओं और हिन्दी के अन्तरसम्बन्धों को आलोकित करते हुए कहते हैं - 'आधुनिक भारत की संस्कृति एक विकसित शतदल के समान है, जिसका एक-एक दल, एक-एक प्रांतीय भाषा और उसकी साहित्य-संस्कृति है। किसी एक के मिटा देने से उस कमल की शोभा नष्ट हो जाएगी। हम चाहते हैं कि भारत की सब प्रांतीय बोलियाँ, जिनमें सुंदर साहित्य की सृष्टि हुई है, अपने-अपने घर में रानी बनकर रहें। प्रांत के जनगण की हार्दिक चिन्ता की प्रकाशभूमि स्वरूप कविता की भाषा होकर रहें और आधुनिक भाषाओं के हार में मध्य-मणि हिन्दी भारत-भारती होकर विराजती रहे।' हिन्दी साहित्य और सांस्कृतिक जनजागरण की भाषा रही है। यह मजदूरों-किसानों, संतों-महात्माओं की भाषा रही है। इसने भक्तिकाल में पूरे देश को एकसूत्र में बाँधकर भारत राष्ट्र को भावात्मक और सांस्कृतिक रूप से सुदृढ़ और समृद्ध किया है। यह राजाराम मोहनराय, दयानंद सरस्वती जैसे समाज सुधारकों की भाषा रही है। यह नानक, कबीर, सूर, तुलसी, मीरा, जायसी की भाषा तो है ही, यह सुभाषचन्द्र बोस की आजाद हिन्द फौज की हिन्दुस्तानी हिन्दी थी। महर्षि अरविन्द हिन्दी प्रचार को स्वाधीनता आन्दोलन का हिस्सा मानते थे। महात्मा गांधी के स्वदेशी आन्दोलन में स्वेदशी वस्तुएँ स्वभाषा और स्वराज्य-प्राप्ति ही लक्ष्य था।

## हिन्दी शिक्षण–प्रशिक्षण में समस्याएँ

इतनी सहज, सरल, संस्कृति-संवाहक, राष्ट्र-प्रबोधनी और वर्तमान की चुनौती को स्वीकार करती चलती हिन्दी के शिक्षण-प्रशिक्षण की कुछ समस्याएँ हैं। प्रत्येक भाषा के प्रमुखतः पाँच अवयव होते हैं - 1. ध्वनि, 2. शब्द, 3. वाक्य, 4. अर्थ और 5. लिपि। ये पाँचों ही हिन्दी को सरलता भी देते हैं, लेकिन इनसे

जुड़ी समस्याएँ भी हैं। हिन्दी की समस्याओं के आधार में दो रूप हैं – 1. कल्पित, 2. वास्तविक।

1. हिन्दी की सबसे बड़ी समस्या मनोविज्ञान से जुड़ी है। हिन्दी के शिक्षण में संकल्प का अभाव है। कल्पना के माध्यम से मनोवैज्ञानिक तौर पर हिन्दी को कठिन मानकर उसे न सीखने या उसके प्रति उपेक्षा-भाव भी काम करता है। यदि हम हिन्दी शिक्षण-प्रशिक्षण में संकल्प के साथ प्रवृत्त हों, तो हिन्दी क्या, विश्व की कोई भी भाषा सीखी जा सकती है।

2. हिन्दी के मानक रूप का न होना भी समस्या है। भारत के अलग-अलग प्रांतों और क्षेत्रों में हिन्दी के अलग-अलग रूपों का प्रयोग होता है। हिन्दी के सर्वमान्य मानक रूप का अभाव भी देश-विदेश में हिन्दी-शिक्षण में समस्या पैदा करता है।

3. हिन्दी शिक्षण-प्रशिक्षण की अन्य समस्या पारिभाषिक शब्दावली के निर्माण की है। पारिभाषिक शब्दावली के अभाव में वैज्ञानिक अथवा प्रौद्योगिक ज्ञान का विकास और विस्तार संभव नहीं है। यह भी विचारणीय है कि पारिभाषिक शब्दावली भारतीय भाषाओं को आधार बनाकर बनायी जाए कि अंग्रेजी के शब्दों को ज्यों का त्यों ग्रहण कर। इस पारिभाषिक शब्दावली में एकरूपता का न होना भी समस्या है। अपेक्षित गंभीरता और निष्पक्षता की कमी से भी पारिभाषिक शब्दावली का अपेक्षित निर्माण नहीं हो सका है।

4. हिन्दी शिक्षण-प्रशिक्षण की एक अन्य समस्या यह है कि हिन्दी का अध्यापन किस कक्षा से प्रारंभ किया जाए? एक ओर भाषा वैज्ञानिक और शिक्षाविद्-नृतत्वशास्त्री कहते हैं कि बच्चे को प्रारंभिक शिक्षा मातृभाषा में ही दी जानी चाहिए। शिशु में अनुकरण की क्षमता प्रबल होती है। उँची कक्षा में पहुँचने पर या किशोर अवस्था में पहुँचने पर वह हिन्दी या अन्य भाषा उतनी आसानी से नहीं ग्रहण कर सकता। अतः असमंजस की स्थिति में हिन्दीतर या भारतेतर देशों में हिन्दी शिक्षण-प्रशिक्षण किस कक्षा से हो, यह तय कर पाना भी एक समस्या है।

5. हिन्दी शिक्षण-प्रशिक्षण में आधारभूत शब्दावली का अभाव भी एक

समस्या है। हिन्दी के पास एक सार्वभौमिक शब्दावली अपेक्षित है, जिसके प्रयोग से भारत के प्रान्तों एवं विदेशों में हिन्दी शिक्षण सरल हो सके।

6. पाठ्य पुस्तकें भाषा और ज्ञान-विज्ञान के प्रशिक्षण का आधार होती हैं। हिन्दी में अलग-अलग प्रांतों एवं विदेशों में शिक्षण के लिए वहाँ के छात्रों के मानसिक स्तर, भाषा की ग्राह्यता और हिन्दी-भाषा के प्रति रुचि को ध्यान में रखकर पाठ्य पुस्तकों का निर्माण होता है। इस क्षेत्र में हिन्दी में उपयुक्त पाठ्य पुस्तकों का निर्माण एवं उचित समय पर प्रकाशन न होना भी समस्या है।

7. प्रत्येक समाज एवं प्रत्येक देश के ध्वनि-स्तर भिन्न होते हैं। ध्वनि के आधार पर भाषा का रूप निर्मित होता है। हिन्दी की विशिष्टता का परिचय उसकी ध्वनियों के द्वारा ही मिलता है। हिन्दी की ध्वनियाँ और उच्चारण-प्रक्रिया अन्य भाषाओं की ध्वनि-प्रक्रियाओं से भिन्न होने के कारण उसके शिक्षण-प्रशिक्षण में समस्या उत्पन्न होती है।

8. भौगोलिक स्थिति की भिन्नता के कारण हिन्दीतर भाषियों के समक्ष शुद्ध उच्चारण की समस्या रहती है। हिन्दी वर्णमाला का ज्ञान अवैज्ञानिक ढंग से दिये जाने के कारण बहुत सी उच्चारण तथा वर्तनी सम्बन्धी भ्रांतियाँ हो जाया करती हैं। कहीं-कहीं अनुस्वार और अनुनासिक वर्णों की कठिनाई के साथ ही महाप्राण सघोष के शुद्ध उच्चारण में अवरोध भी पैदा होता है। जैसे- 'गधा' के स्थान पर 'गदा'। लेखन सम्बन्धी अनेकरूपताएँ भी समस्याएँ पैदा करती हैं। इसी प्रकार अशुद्ध उच्चारण के अनुसार लिखने के कारण सीखने वाला भ्रम में पड़ जाता है। चिन्ह-चिह्न, भूक-भूख, झूट-झूठ आदि शब्द उच्चारण की अशुद्धता के कारण लिखते समय भ्रांति पैदा करते हैं।

9. हिन्दी व्याकरण और अन्य भाषाओं के व्याकरण में भिन्नता होने से भी शिक्षण-प्रशिक्षण में समस्या आती है। क्रिया, सर्वनाम, लिंग, वचन आदि के कारण अड़चन होती है। संस्कृत में 'रामः गच्छति' तथा 'सीता गच्छति' दोनों राम और सीता के साथ क्रिया-रूप एक हैं। अंग्रेजी में भी 'Sita goes' ही होता है लेकिन हिन्दी में 'राम जाता है' और 'सीता जाती है' होता है। संस्कृत में तीन वचन हैं। हिन्दी में दो ही वचन हैं। लिंग निर्धारण कर उसके अनुसार क्रिया प्रयोग भी एक

समस्या है। पेट पुल्लिंग है। पीठ स्त्रीलिंग। कान पुल्लिंग है। नाक स्त्रीलिंग। लिंग निर्धारण में - अर्थ, रूप, सादृश्य, साहचर्य का आधार लिया जाता है।

10. हिन्दी शिक्षण-प्रशिक्षण की अन्य समस्या वर्तनी सम्बन्धी है। हिन्दी की वर्तनी की समस्याएँ हैं। तत्सम शब्दों के रूप की समस्या-हलन्त की समस्या-सत्, महत्, दिक्, जगत् आदि। द्वित्व की समस्या-सतत्व, महत्व, वर्द्धमान, अर्द्ध आदि। य-श्रुति की समस्या जाय-जाए, आइये-आइए, कीजिये-कीजिए। अनुस्वार और चन्द्र-बिन्दु की समस्या-अंगना-अँगना, हंस-हँस। विदेशी ध्वनियों के लेखन की समस्या-रेस्तरां, सरदी, गरमी, नरम, शरम आदि।

जिस प्रकार भारत में अनेक भाषाएँ हैं, उसी प्रकार लिपियाँ भी अनेक हैं। जहाँ समस्या भाषा को लेकर है, वही समस्या लिपि को लेकर भी है। यदि भाषाओं की अनेकता पारस्परिक बोधगम्यता में बाधक है, तो हिन्दी शिक्षण-प्रशिक्षण में लिपि की भिन्नता भी एक समस्या है।

## हिन्दी शिक्षण–प्रशिक्षण में चुनौतियाँ

हिन्दी शिक्षण-प्रशिक्षण के सामने समस्याओं के साथ-साथ चुनौतियाँ भी अनेक हैं। आज के बाजार-युग में भाषा भी वस्तुओं को बेचने का माध्यम के सिवाय कुछ नहीं रह पायी है। बाजार, वस्तुवाद, उपभोक्तावाद, उपयोगितावाद से हिन्दी को खतरा है। हिन्दी के मूल स्वरूप को विकृत किया जा रहा है। हिन्दी शिक्षण को रोजगार से जोड़कर देखा जा रहा है। हिन्दी के सामने कम्प्यूटर भी एक चुनौती बनकर आया है। हिन्दी शिक्षण की कक्षाओं में छात्रों की संख्या एकदम कम होती जा रही है। अधिकांश विद्यार्थी इंजीनियरिंग, व्यवसायिक और चिकित्सकीय पाठ्यक्रमों में चले जाते हैं। हिन्दी साहित्य, कला, संस्कृति से जुड़े विषयों को पढ़ने में छात्रों की रुचि तेजी से घटती जा रही है। हिन्दी शिक्षक के सम्मान में भी कमी आयी है। उसे उपेक्षा के भाव से देखा जाता है। हिन्दी के सामने उक्त तथ्य चुनौती बनकर खड़े हैं। हिन्दी मात्र विज्ञापन की भाषा बनकर न रह जाए, उसे इस खतरे से बचना है और बाजारवाद की चुनौतियों को स्वीकार करते हुए अपने मौलिक और सांस्कृतिक स्वरूप को बचाए रखना है।

## समाधान

हिन्दी शिक्षण-प्रशिक्षण में आने वाली समस्याओं और चुनौतियों के समाधान के कुछ उपाय, सुझाव रूप में निम्नलिखित हो सकते हैं :-

1. प्रत्येक प्रांत में केन्द्र सरकार एवं प्रांतीय सरकार द्वारा हिन्दी शिक्षण की व्यवस्था हो।

2. विदेशों में हिन्दी शिक्षण-प्रशिक्षण कार्य संबंधित देशों की सहमति से भारत सरकार के विदेश मंत्रालय एवं केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय द्वारा सम्पन्न किये जाएँ।

3. आधारभूत शब्दावली की रचना केन्द्रीय पारिभाषिक शब्दावली आयोग के माध्यम से हो।

4. हिन्दी शिक्षण-प्रशिक्षण के लिए प्रशिक्षण संस्थानों की स्थापना हो, जिसमें सुयोग्य हिन्दी प्रशिक्षक नियुक्त हों।

5. हिन्दी भाषा में भाषणों, गीतों के टेपरिकार्ड हों।

6. रेडियो-दूरदर्शन पर विशेष हिन्दी कार्यक्रमों का प्रसारण हो।

7. सम्पूर्ण देश की भाषाओं के साहित्य का हिन्दी में अनुवाद हो।

8. तुलनात्मक भाषा अध्ययन के पाठ्यक्रम संचालित किये जाएँ।

9. द्विभाषी पत्रिकाओं, जिसमें एक भाषा हिन्दी हो, का प्रकाशन-प्रचार किया जाए।

10. अध्यापकों के लिए हिन्दी-शिक्षण सम्बन्धी निर्देश सामग्री तथा विद्यार्थियों के लिए स्वाध्याय रुचिकर सामग्री का प्रकाशन किया जाए। उक्त कार्य समाधान की राह प्रशस्त करने में सहायक हो सकते हैं।

## समाधान हेतु वर्तमान में किये जा रहे प्रयास

उपर्युक्त समाधानात्मक सुझावों के आलोक में भारतवर्ष में हिन्दी शिक्षण-प्रशिक्षण की दिशा में अनेक प्रयास किये जा रहे हैं।

1. भारत में लगभग 500 विश्वविद्यालय और लगभग 2000 महाविद्यालय हैं। इन सभी में किसी न किसी रूप में हिन्दी का अध्यापन और शोध कार्य होता है।

2. हिन्दी भाषी प्रान्तों में प्राथमिक एवं उच्च शिक्षा का माध्यम हिन्दी ही है।

3. लगभग 162 से अधिक विदेशी विश्वविद्यालयों में हिन्दी का अध्ययन-अध्यापन होता है।

4. महात्मा गांधी अन्तरराष्ट्रीय हिन्दी विश्वविद्यालय, वर्धा (भारत) पूर्ण रूप से हिन्दी को समर्पित है, जिसमें हिन्दी से जुड़े अनेक पाठ्यक्रम संचालित किये जा रहे हैं।

5. अब भारत के मध्य प्रदेश में भी हिन्दी विश्वविद्यालय की स्थापना की घोषणा हो चुकी है।

6. भारत सरकार द्वारा मान्यता प्राप्त 20 से अधिक हिन्दी सेवी संस्थाएँ हिन्दी के प्रचार-प्रसार का कार्य करती हैं।

7. केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय, दिल्ली, साहित्य अकादमी, दिल्ली, पारिभाषिक शब्दावली आयोग, दिल्ली, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा, दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार समिति, चेन्नै एवं धारवाड़ हिन्दी के विभिन्न क्षेत्रों में उन्नति हेतु कार्य कर रही हैं। प्रत्येक प्रांत की राज्य स्तरीय साहित्य अकादमियाँ हिन्दी की पत्रिकाओं का प्रकाशन कर, हिन्दी केन्द्रित कार्यक्रमों का आयोजन कर प्रचार-प्रसार का कार्य कर रही हैं।

8. भारत में व्यक्ति-स्तर पर और संस्था-स्तर पर हिन्दी केन्द्रित अनेक पत्र-पत्रिकाओं, लघु पत्रिकाओं का प्रकाशन किया जा रहा है, जो हिन्दी शिक्षण-प्रशिक्षण के साथ साहित्य-संस्कृति-कला के संरक्षण-संवर्धन की दिशा में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही हैं।

9. महाविद्यालयों एवं विश्वविद्यालयों में रोजगारोन्मुख पाठ्यक्रमों को हिन्दी से जोड़ कर संचालित किया जाना भी हिन्दी की आज की आवश्यकता की पूर्ति करता है।

10. मनोरंजन जगत, वाणिज्य, पर्यटन, जनसंचार माध्यम, योग, विज्ञापन लेखन, अनुवाद, दुभाषिया, भाषा-प्रबन्धन, राजभाषा उद्योग, दृश्य-श्रव्य माध्यमों द्वारा हिन्दी शिक्षण आदि क्षेत्रों में हिन्दी के माध्यम से रोजगार की संभावनाएँ बहुत बढ़ी हैं।
हिन्दी भाषा या किसी भी भाषा के शिक्षण के लिए मूलभूत पाँच घटकों का होना आवश्यक है - 1. शिक्षक, 2. शिक्षण की विषय-वस्तु, 3. माध्यम, 4. विषय-वस्तु

को ग्रहण करने वाला प्रशिक्षु (छात्र) 5 प्रतिपुष्टि।

सभ्यता तथा विज्ञान के विकास के साथ-साथ रेखांकन, चित्र, चित्रलिपि, भाषा, मुद्रण, फोटोग्राफी, रेडियो, सिनेमा, दूरदर्शन, कम्प्यूटर, ग्राफिक्स आदि शिक्षण के माध्यमों में अधुनातन माध्यम - 1. पाठ, 2. श्रव्य, 3. दृश्य, 4. श्रव्य-दृश्य, 5. कम्प्यूटरित प्रस्तुति आदि भी प्रविष्ट हो गये हैं।

इसके अतिरिक्त हिन्दी शिक्षण-प्रशिक्षण में श्यामपट, माडल्स (ठोस प्रारूप) ओ। एच। पी।, एल। सी। डी। आदि का प्रयोग भी प्रभावशाली सिद्ध हो रहा है।

हमारा अनुभव परिवेश से जुड़ा होता है। भूगोल भी संस्कृति को रचता है। ऐसी स्थिति में भाषा केवल शब्दों को लेकर ही अपनी भाषिक बस्ती नहीं बसती, वह अर्थ का पूरा संसार रचती है। यह शब्द-अर्थ का रथ अपने साथ हजारों वर्षों की परम्परा लेकर आता है। परम्परा को ठीक से जानने-समझने के लिए अपनी भाषा ही उपयुक्त और सक्षम हो सकती है। यह उपयुक्तता और सक्षमता भारत के सन्दर्भ में हिन्दी के पास है। हिन्दी भारत माता के माथे की बिन्दी है। भारत-भारती के कवि मैथिलीशरण गुप्त की पंक्तियों में हम कामना करते हैं :-

मानस भवन में आर्यजन, जिसकी उतारें आरती।
भगवान भारतवर्ष में, गूंजे हमारी भारती।।
(भगवान पूरे विश्व में, गूंजे हमारी भारती)

# हिब्रू भाषा भाषी छात्रों को हिंदी पढ़ाने की समस्याएँ और उनका समाधान

– डॉ. गेनादी श्लोम्पेर

इज्रायल एक छोटा देश है, जिसकी आबादी सिर्फ सतहत्तर लाख है। फिर भी हर साल भारत की यात्रा करने वालों की संख्या 30-40 हजार तक पहुँचती है। अधिकतर यात्री उत्तर भारत में घूमने जाते हैं। लेकिन हिब्रू-हिंदी वार्तालाप की किताबें इतनी मात्रा में नहीं बिकती हैं जितनी बिकने की उम्मीद है। हर साल चार-पाँच सौ किताबें बिक जाती हैं। हाँ, इसके कई कारण तो स्पष्ट ही हैं। आजकल किसी भी देश में यात्री, अंग्रेजी का प्रयोग करके ही अपना काम कर लेते हैं। फिर कोई भी भाषा अपनाने के लिए काफी परिश्रम और समय व्यतीत करना पड़ता है। हिब्रू भाषा भाषियों के लिए हिंदी सरल नहीं लगती, और सरल है ही नहीं। इसके अनेक सबूत हिंदी के पाठों में मिले हैं।

हिंदी पढ़ाते समय जो समस्याएँ सामने आती हैं, उनको दो वर्गों में विभाजित किया जा सकता है। कुछ समस्याएँ ऐसी हैं जो किसी भी विदेशी भाषा के अध्ययन-अध्यापन में पाई जाती हैं। यानी ये सब भाषाओं के लिए सामान्य हैं। तो कुछ विशेष भाषाओं से जुड़ी होती हैं।

## सामान्य समस्याएँ

मेरे विचार में सामान्य समस्याओं में सबसे महत्वपूर्ण ये हैं – भाषा पढ़ने की प्रेरणा और लक्ष्य, बोलने के अभ्यास के लिए भाषा बोलने वालों की उपस्थिति, पर्याप्त संख्या में पाठ्य पुस्तकों की उपलब्धि और भाषा पढ़ाने के माध्यमों (उपकरणों) का प्रयोग।

बहुत से इजरायली लोग बड़ी इच्छा और रुचि के साथ हिंदी भाषा को स्वयं ही पढ़ते हैं। उन्हें हिंदी पढ़ने की प्रेरणा इस बात से मिलती है कि वे भारतीय संस्कृति में अभिरुचि रखते हैं और उनकी पढ़ाई का लक्ष्य प्रायः बोल-चाल की भाषा अपना कर आम लोगों से बात करना होता है। विश्वविद्यालय में हिंदी कोर्स

का लक्ष्य अधिक गहराई से भाषा की जानकारी देना है। विद्यार्थी साहित्य और अखबार पढ़ना, रेडियो और टी.वी. प्रसारण समझना सीख लेते हैं। लेकिन दोनों ही स्थितियों में, चाहे कोई स्वयं पढ़ता हो या विश्वविद्यालय के कोर्स में, हिन्दी भाषियों का अभाव महसूस होता है, जिनके साथ पाठों के बाद बात की जा सके। इस तरह भारत के बाहर हिंदी सीखने वालों को बात करने का पर्याप्त अभ्यास नहीं मिलता और उनकी जानकारी मुख्यतः निष्क्रिय है। वे लिखी या कही हुई बातें तो समझते हैं लेकिन बोलने में कठिनाई होती है।

## विशेष समस्याएँ

कोई भी भाषा सीखने की विशेष समस्याओं में लिपि, उच्चारण और व्याकरण मुख्य हैं।

### क – लिपि

इज़रायल में प्रचलित हिब्रू भाषा में शब्द दायें से बायें लिखे जाते हैं, जैसे अरबी भाषा में। फिर भी हिब्रू भाषियों के लिए हिंदी की लिपि अपनाना कोई समस्या नहीं है। एक ही महीने के अंदर लगभग सभी विद्यार्थियों को हिंदी अक्षरों का पूर्ण ज्ञान आ जाता है और वे स्वयं कोई भी शब्द लिख या पढ़ सकते हैं। उल्लेखनीय है कि मैंने विभिन्न देशों में तीन भाषाएँ बोलने वाले छात्रों को हिंदी सिखाई थी और कभी भी लिपि अपनाने में कोई कठिनाई नहीं हुई।

### ख – उच्चारण

कुछ विशेष ध्वनियों को छोड़कर हिंदी की अधिकतर अल्पप्राण ध्वनियाँ हिब्रू की अल्पप्राण ध्वनियों से मेल खाती हैं। इसलिए छात्रों को ये ध्वनियाँ पकड़ने में अधिक समय नहीं लगता। हाँ, महाप्राण तो हिब्रू में नहीं हैं, लेकिन उनको भी छात्र थोड़े अभ्यास के बाद ही सही रूप से उच्चारित करने लगते हैं।

ह्रस्व और दीर्घ स्वरों के उच्चारण में अंतर को समझा-समझा कर थक जाता हूँ। अगर शब्द में दो-तीन दीर्घ स्वर होते हैं, तो हिब्रू वाले छात्र एक पर बल देते हैं और शेष स्वर ह्रस्व बन जाते हैं, क्योंकि हिब्रू में बलाघात काफी

महत्वपूर्ण है। हिब्रू में केवल बलवान और बलहीन स्वरों का भेद होता है।

'रकार' को केवल वे विद्यार्थी ठीक से उच्चारित करते हैं, जिनके पूर्वज एशिया, अफ्रीका या पूर्वी यूरोप से इजरायल में आये थे और अपनी मातृ भाषाओं की छाप अपने बच्चों की भाषा पर छोड़ी है। तो ये लोग 'रकार' को भारतीयों की तरह उच्चारित करते हैं। लेकिन जिन लोगों की जड़ें पश्चिमी यूरोप में हैं, या जिनके माँ बाप इज्रायल में पैदा हुए थे, उनका 'र', 'ग' जैसा लगता है।

उच्चारण की समस्याएँ छात्रों की व्यक्तिगत विशेषताओं से जुड़ी हुई होती हैं और पूरी तरह से अध्यापक के बस में नहीं हैं। लेकिन कुछ ऐसे प्रयत्न अवश्य किये जा सकते हैं जो उच्चारण को काफी हद तक सुधार सकते हैं।

इसमें कोई संदेह नहीं कि उच्चारण सुधारने के लिए यह जरूरी होता है कि छात्र विभिन्न हिंदी भाषियों के मुख से बातें सुनें, जिनके बात करने के ढंग और बात करने की गति भिन्न हों। लेकिन बात करने के तरीकों की नकल उतारने, उच्चारण पकड़ने में स्वतंत्र काम कहीं ज्यादा कारगर साबित होता है। अपने अनुभव के आधार पर मैं इस परिणाम पर पहुँचा कि हिंदी गाने और हिंदी फिल्मों की डबिंग उच्चारण सुधारने में सब से प्रभावकारी हैं। इसके लिए बॉलिवुड हमें यह सामग्री पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध कराता है। गाने और फिल्में अध्यापक के निरीक्षण में सीखे जाते हैं, जो उच्चारण के गलत या सही होने का निर्णय ले सकता है। लेकिन दोनों अभ्यास स्वतंत्र काम को उत्तेजित कर देते हैं। छात्रों को गानों का हर पद या फिल्म का हर वाक्य बार-बार दोहराना पड़ता है और उन्हें खुद अपनी अदायगी का मूल्यांकन भी करना होता है।

ऐसा काम पढ़ाई के प्राथमिक चरणों में भी किया जा सकता है, जब छात्रों का शब्द भंडार और व्याकरण की जानकारी सीमित होती है। यह बात उल्लेखनीय है कि नकल करने के ये अभ्यास, छात्रों को अनिवार्य काम के तौर पर नहीं, एक अतिरिक्त काम के रूप में पेश किये जाते हैं। इस तरह विद्यार्थी उन्हें मनोरंजन समझकर ही पूरा कर लेते हैं। यह काम उच्चारण सुधार के साथ-साथ छात्रों की शब्दावली बढ़ाने में सहायक होता है, जिस से पाठ का समय बेकार नहीं जाता।

गाना तो कक्षा के सब छात्रों के लिए एक ही होता है, जबकि फिल्मों की डबिंग में हर दृश्य में दो-चार छात्र भाग लेते हैं। इसलिए छात्रों के हर समूह को चार-पाँच दृश्य बांटे जाते हैं। इस तरह वे न केवल अपना-अपना भाग प्रस्तुत करते हैं, वरन् अपने सहपाठियों के उच्चारण का मूल्यांकन भी करते हैं।

## ग – व्याकरण

व्याकरण की समस्याओं पर चर्चा करने से पहले मैं यह कहना चाहूँगा कि मुझे तीन देशों के छात्रों को हिंदी पढ़ाने का अवसर मिला था, जिनकी मातृ भाषाएँ अलग-अलग थीं। अर्थात् रूसी, उजबेक और हिब्रू। प्रतिभाशाली छात्र तो हर देश में होते हैं। लेकिन जब साधारण लोगों की बात की जाए, तो हिंदी सीखने के मामले में हिब्रू भाषियों की तुलना में रूसी और उजबेक छात्रों को काफी सुविधाएँ प्राप्त हैं। मेरा मतलब व्याकरण के अधिकतर नियमों और विशेषकर क्रिया-व्यवस्था में सामानता से है। यही नहीं, उजबेक भाषा में शब्द-क्रम हिंदी से बहुत मिलता-जुलता है। और हिंदी से भिन्न है। दूसरे शब्दों में किसी एक साधारण हिब्रू भाषी छात्र को साधारण रूसी और उजबेक छात्र की अपेक्षा हिंदी अपनाने के लिए कहीं ज्यादा परिश्रम करना पड़ता है।

हिब्रू सामी (Semitic) भाषा है। इसका ढाँचा हिंदी से बिल्कुल अलग है। इसलिए व्याकरण की जिन समस्याओं से छात्र आमतौर से परेशान होते हैं, उनमें वाक्य रचना प्रथम है। हिब्रू में वाक्य का ढाँचा इस तरह है - कर्ता, क्रिया, कर्म, जबकि हिंदी में - कर्ता, कर्म, क्रिया। इसलिए हिब्रू भाषियों को तीन-चार शब्द से ज्यादा लंबे वाक्य बनाने के लिए काफी लंबे अरसे से भाँति भाँति के अनेक अभ्यास करने पड़ते हैं। बहुत से विद्यार्थी दो साल के कोर्स के बाद भी बहुशब्द या संयुक्त वाक्य बनाने में काफी गलतियाँ करते हैं।

उजबेक भाषी छात्रों को एक और सुविधा है। हिंदी की तरह उजबेक भाषा में कारक चिह्न और परसर्ग, संज्ञा के बाद आते हैं, जबकि हिब्रू में संज्ञा के पहले। कारक चिह्न का 'का' विशेष तौर पर बहुत से हिब्रू भाषी छात्रों के लिए एक बड़ी बाधा के रूप में प्रमाणित हुआ है।

हिब्रू में हर काल के लिए क्रिया का एक ही रूप होता है जो पुरुष और वचन में रूपांतरित होता है। जबकि हिंदी में वर्तमान काल और अतीत काल में बहुत सारे रूप पाये जाते हैं। जैसे

मैंने पढ़ा
मैंने पढ़ा है
मैंने पढ़ा था
मैं पढ़ता था
मैं पढ़ रहा था

इन सबके लिए हिब्रू में क्रिया का एक ही रूप है - ..... (कराती)। किसी विशेष काल में हिंदी की क्रिया का अर्थ और भेद समझाने के लिए हिब्रू में क्रिया-विशेषण लगाये जाते हैं। फिर हिंदी में संदिग्धार्थ और संभावनार्थ (जो इच्छाबोधक क्रियारूप भी है) महत्त्वपूर्ण हैं, जबकि हिब्रू में ये सब अनुपस्थित हैं।

हिंदी व्याकरण में एक और बात है जो इजरायली छात्रों के लिए (और सभी विदेशी छात्रों के लिए) एक विशेष परेशानी का कारण सिद्ध हुई है। और वह है संयुक्त क्रियाएँ। जैसे -

मैंने दे दिया
मैंने दे रखा
मैंने दे डाला
मैं दे बैठा            आदि

एक तरफ तो वे व्याकरण से संबंधित हैं और दूसरी तरफ शब्द रचना से। ऐसे क्रियारूप हिब्रू और दूसरी बहुत सी भाषाओं में उपलब्ध नहीं है। संयुक्त क्रियाओं पर पश्चिमी देशों के विद्वानों ने बड़ी संख्या में शोध कार्य किया है, मगर भारतीय विद्वानों ने इन पर ध्यान नहीं दिया। मेरे विचार में बहुत जरूरी है कि भारत के भाषाविज्ञ इस विषय पर एक अच्छी पुस्तक लिखें, ताकि विदेशी छात्रों को हिंदी की पढ़ाई में सहायता मिले।

अक्सर हिंदी का व्याकरण समझाने के लिए मैं अंग्रेजी भाषा का हवाला करता हूँ। क्योंकि अंग्रेजी और हिंदी के व्याकरण में कुछ ऐसे तथ्य हैं जो या तो

एक जैसे हैं, या मेल खाते हैं। चूंकि सब विद्यार्थी अच्छी तरह अंग्रेजी जानते हैं, यह भाषा हिंदी के पाठों में मेरे बहुत काम आती हैं। अंग्रेजी हिंदी की बहन तो है, मगर जुड़वा बहन नहीं है। इसलिए हिंदी की विशेषताएँ समझाने के लिए मुझे दूसरे उपाय खोजने पड़ते हैं।

इस सिलसिले में मेरा निजी अनुभव कहता है कि भाषा की पढ़ाई में अच्छे परिणाम प्राप्त करने के लिए पाठ भावनात्मक विधि पर आधारित होने चाहिए। भाषा जो भी हो, छात्र अंग्रेजी, रूसी, हिब्रू या उजबेक क्यों न बोलते हों - सिद्धांत एक ही होना चाहिए। इसके अन्तर्गत भाषा के अध्यापक को अवचेतन के स्तर पर छात्रों की भावनाएँ प्रभावित करनी चाहिए। प्रौद्योगिकी के विकास ने भाषा के अध्यापकों के हाथों में ऐसे यंत्र और साधन थमा दिये हैं, जिनका वे थोड़े ही साल पहले सपना तक नहीं देखते थे। कम्प्यूटर, इंटरनेट, यूट्यूब ने विदेशी भाषाओं को सीखने की पहुँच को, इसके लक्ष्य को बदल दिया है। इन सबसे विदेशी भाषाओं को सीखने की प्रेरणा बहुत बढ़ जाती है और किसी कुशल अध्यापक के हाथों में ये सब साधन और ज्यादा कारगर बन सकते हैं।

पिछली सदी के छठे दशक में बलगारिया के मनोविज्ञानी गेओर्गी लोजानोव ने विदेशी भाषाओं को सीखने की एक अत्यंत फलदायक पद्धति suggestopedic प्रस्तुत की थी, जिसमें अभिनय को बड़ा महत्व दिया गया। इस पद्धति का वयस्कों के समूहों में सफल प्रयोग किया गया।

जिस तेल अवीव विश्वविद्यालय में मैं हिंदी पढ़ाता हूँ, उसमें प्रोफेसर लोज़ानोव की पद्धति को पूरी तरह से क्रियान्वित कर पाना बहुत मुश्किल है। घंटों का आभार, हर समूह में छात्रों की बड़ी संख्या (20-25 तक छात्र)। फिर यह भी ध्यान में रखना पड़ता है कि हिंदी मुख्य विषय नहीं है, बल्कि दस-बारह विषयों में से एक है, जिसको कुछ छात्र विवश होकर ही चुनते हैं। लेकिन प्रोफेसर लोज़ानोव की पद्धति के कुछ अंश पाठ्यक्रम में जरूर सम्मिलित किये जा सकते हैं, और सम्मिलित किये जाने चाहिए।

उदाहरण के लिए पढ़ाई के प्रारंभिक चरणों में किसी भी विषय पर बात-चीत तैयार की जा सकती है (जैसा कि वार्तालाप की किताबों में होता है)। जैसे- बाजार में, दुकान में, रेस्टोरेंट में, होटल में, सड़क पर, डॉक्टर के पास, मंदिर में आदि।

इस तरह एक छोटी सी एकांकी बन जाती है, जिसका अभिनय करते समय छात्र एक साधारण से टेक्स्ट को अपनी भावनाओं से रंग देते हैं। यही कारण होगा कि ऐसे वार्तालापों का अभिनय, किसी शुष्क टेक्स्ट को बार-बार पढ़वाने और अनुवाद कराने से अधिक फलदायक होते हैं। मुझे हिंदी और हिब्रू के व्याकरणों में अंतर, उदाहरण के लिए शब्द-क्रम या संयुक्त क्रियाओं का उपयोग समझाने में काफी समय लगता है, जबकि किसी एकांकी का मंचन करते समय ये सब नियम ज्यादा जल्दी छात्रों की समझ में आते हैं।

हमारे विश्वविद्यालय में हर साल दस जनवरी को अन्तरराष्ट्रीय हिंदी दिवस मनाया जाता है। उस दिन हिंदी के छात्र हिंदी में रंगारंग तमाशा प्रस्तुत करते हैं, जिसमें गाने, कविताएँ, नाटक आदि शामिल होते हैं। इसके लिए एक-दो महीने से नाटकों की चर्चा रहती है। नाटकों से छात्र इतना प्रभावित होते हैं कि वे पूरे के पूरे वाक्य याद करके पाठों में उनका उल्लेख करते हैं और विभिन्न मौकों पर उनका सही हवाला देते हैं।

छात्रों ने स्वयं नये-नये नाटक सीखने की बिनती की। अब वे नियमित रूप से नये-नये एकांकी सीखते हैं और उनका मंचन करते हैं। कभी-कभी फिल्मों के रूप में यूट्यूब में लगा देते हैं। इस प्रकार हिंदी पढ़ने में छात्रों की रुचि और प्रेरणा बढ़ गयी है, जिसके कारण पढ़ाई में भी वृद्धि हुई। जिन एकांकियों का वे मंचन कर चुके हैं, उनमें

कनाद ऋषि भटनागर का एकांकी 'जुलूस'
रूपनारायण शर्मा का एकांकी 'किराए का मकान'
गिरिराज शरण अग्रवाल के कई व्यंग्य एकांकी
प्रेमचंद के उपन्यास 'रंगभूमि' का एक गद्यांश
पंचतंत्र की कई कहानियों पर आधारित कुछ एकांकी

छात्रों को प्रेरित करने के लिए मैंने तीसरे साल का हिंदी कोर्स पूरी तरह से दूरदर्शन के समाचारों पर आधारित किया। लेकिन पढ़ाई के प्रारंभिक चरणों में समाचारों का प्रयोग नहीं किया जा सकता। इन चरणों में एकांकी ही सबसे उचित सामग्री प्रदान करते हैं। समस्या बस इस बात की है कि उपयुक्त एकांकी ढूढ़ पाना सरल नहीं है। जरूरी यह है कि वाक्य छोटे और स्पष्ट हों, उनकी शब्दावली छात्रों

की जानकारी के स्तर से मेल खाएँ, एकांकी रोचक और मनोरंजक हों। ऐसा होता है कि या तो मुझे खुद एकांकी लिखना पड़ता है या उपलब्ध रचनाओं के साथ अनुकूलन स्थापित करना पड़ता है। कभी-कभी एकांकी की कहानी में बदलाव करना पड़ता है। लेकिन किसी की साहित्यिक रचना में बदलाव लाना इसी रचना को नये सिरे से लिखने के समान होता है।

कितना अच्छा होगा यदि केन्द्रीय हिंदी संस्थान या अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय जैसे अनुसंधान केन्द्र पेशेवर लेखकों के सहयोग से ऐसे एकांकी संग्रहों की लड़ी तैयार करें जो पढ़ाई के विभिन्न चरणों में प्रयुक्त हों और जो प्रचलित पाठ्य-पुस्तकों को अधिक प्रभावी बना दें।

# दूसरी भाषा के रूप में हिंदी

**– चित्रा कुमार एवं ऐश्वर्ज कुमार**

सन् 2007 में पहली बार कैम्ब्रिज असेसमेंट, जो कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय का अंग है, उसने द्वितीय भाषा के रूप में हिंदी की परीक्षा आरंभ की। कैम्ब्रिज असेसमेंट दुनिया भर के 126 देशों में करीब 500,000 विषयों पर परीक्षाएँ लेने वाली संस्था बन चुकी है। इसके अन्तर्गत लगभग 2000 से भी ज्यादा स्कूल शामिल हो चुके हैं। इसकी मान्यता ब्रिटेन समेत विश्व भर में स्थापित हो चुकी है। अब यू.के. में ही करीब 300 ऐसे स्कूल हैं जहाँ पर कैम्ब्रिज आई.जी.सी. एस.ई. परीक्षाएँ करवा रहा है।

द्वितीय भाषा के रूप में हिंदी की परीक्षा पर विचार-विमर्श 2005 में आरंभ हुआ और वर्ष 2005 में परीक्षा का पहला नमूना तैयार किया गया। हालांकि परीक्षा का नमूना बनाने से पहले कुछ स्कूलों की ओर से हिंदी के एक ऐसे प्रश्न पत्र की माँग उठाई गई, जिसके माध्यम से बोलचाल और प्रतिदिन की हिंदी प्रयोग को उजागर किया जाए। इस माँग को ध्यान में रखकर ही कैम्ब्रिज परीक्षा द्वारा संचालित अंग्रेजी के प्रश्नपत्र की शैली को एक विकल्प के रूप में सुझाया गया था। लेकिन हिंदी के प्रश्नपत्र को तैयार करते हुए कई अभ्यासों को नये ढंग से पेश करने की कोशिश साकार हुई। इस परीक्षा का पहला प्रारूप कई स्कूलों में भेजा गया। आरंभिक प्रतिक्रिया भी उत्साहवर्धक साबित हुई। लिहाजा इस परीक्षा के बारे में स्कूलों को अधिक जानकारी देने के लिए मुंबई में पहली कार्यशाला आयोजित की गई। इस कार्यशाला का संचालन डॉ. महेन्द्र वर्मा ने किया। कार्यशाला की सफलता का ही नतीजा था कि पश्चिम और उत्तर भारत के स्कूलों द्वारा इस परीक्षा को अपनाया गया। यहीं से दूसरी भाषा के रूप में हिंदी की पहली परीक्षा का 2007 में श्रीगणेश हुआ। लगभग 300 विद्यार्थियों ने इस परीक्षा में हिस्सा लिया।

पहले वर्ष में ही भारत के कई स्कूलों का ध्यान परीक्षा की तरफ आकर्षित हुआ। यह हिंदी भाषा और कैम्ब्रिज परीक्षा के मापदंड का ही असर मानना चाहिए

जिसने जल्द ही न सिर्फ भारत में बल्कि ब्रिटेन समेत दुनिया के कई अन्य देशों के भी स्कूलों का ध्यान खींचा। इस अपार सफलता की बदौलत ही दूसरी भाषा के रूप में हिंदी पाठ्यक्रम की परीक्षा देने वालों की संख्या वर्ष 2007 में 300 विद्यार्थियों से बढ़कर वर्ष 2011 में 1500 तक जा पहुँची है। महज 5 वर्षों में विद्यार्थियों की संख्या में आई अभूतपूर्व वृद्धि स्पष्ट संकेत करती है कि यह विस्तार भविष्य में भी जारी रहेगा। अतः विद्यार्थियों की संख्या में आई अभूतपूर्व बढ़ोत्तरी भविष्य में हिंदी के रचनात्क पाठ्यक्रम के निर्माण की प्रक्रिया को समझाने में अहम साबित हो सकती है। इस पेपर के माध्यम से हिंदी भाषा और भविष्य में दूसरी और तीसरी भाषा के रूप में पाठ्यक्रम पर चर्चा को आगे बढ़ाने का प्रयास है।

हिंदी के पाठ्यक्रम को दूसरी भाषा के रूप में वर्ष 2005 में तैयार करने का विचार महज संयोग नहीं था, बल्कि यह बदलते भारत और दुनिया भर में भारतीयों के सामने अपने बच्चों को हिंदी भाषा से जोड़ने की भावना का परिचायक बना और बन रहा है। अभिभावकों की अपने बच्चों के प्रति चिंता का ही एहसास था कि जब इस परीक्षा का प्रारूप स्कूलों तक पहुँचा तो हाथों-हाथ इस पाठ्यक्रम को अपनाया गया। विज्ञान, अंकगणित, अंग्रेजी भाषा का ज्ञान अपने सपनों को सच करने के लिए अनिवार्य था तो अपनी भाषा को किसी रूप में पढ़ने-पढ़ाने की इच्छा भी जीवित थी। यह इस इच्छा का ही नतीजा था कि हिंदी भाषा की इस परीक्षा को 5 वर्षो के अल्पकाल में ही बड़ा समर्थन प्राप्त हुआ। इस बहस को एक सार्थक दिशा देने के लिए मैंने इस पेपर को दो हिस्सों में बाँटा है। पहला हिस्सा पाठ्यक्रम और उसके प्रमुख बिंदुओं पर केन्द्रित है। दूसरा हिस्सा पाठ्यक्रम में शामिल पढ़ने, लिखने और सुनने के अभ्यासों के माध्यम से हिंदी भाषा की सामग्री और भाषा स्तर पर विश्लेषण की कोशिश है।

सर्वप्रथम, कैम्ब्रिज पाठ्यक्रम के माध्यम से लिखने और पढ़ने की परीक्षा जिसे परीक्षा 1 भी कहा जाता है, प्रमुख है। पढ़ने-लिखने की यह परीक्षा 67 प्रतिशत अंश पर आधारित होती है। यह परीक्षा दो हिस्सों में विभाजित होती है जिसे खंड 1 और खंड 2 कहते हैं। पहले खंड में चार अभ्यास दिये जाते हैं। पहले अभ्यास में एक गद्यांश पढ़ने के बाद, दिए गए 6 प्रश्नों के उत्तर लिखने

पड़ते हैं। यह अभ्यास विद्यार्थी के पढ़ने और दी गई जानकारी को प्रश्न के अनुसार सही उत्तर खोजने की कुशलता पर आधारित होता है। अभ्यास 2 में आवेदन पत्र भरने के लिए विज्ञापन में से सही जानकारी ढूढ़ना शामिल होता है। अभ्यास 3 में भी गद्यांश के प्रश्नों के अनुसार जानकारी एकत्र करके दिए गए प्रश्नों के उत्तर देना प्रमुख होता है। दूसरे शब्दों में पहले तीनों ही अभ्यास सही और उचित जवाब जो गद्यांश या फिर विज्ञापन के रूप में पेश किए जाते हैं, उनको ढूढ़ना ही विद्यार्थी के पढ़ने की क्षमता का परिचायक बनता है। यह भी गद्यांश या विज्ञापन समाचार पत्रों एवं पत्रिकाओं से लिये जाते हैं। शायद सामग्री के स्तर पर किसी निश्चित निर्धारित पाठ्य पुस्तक का न होना भी इसकी एक उपलब्धि माना जा सकता है।

पढ़ने-लिखने के खंड 2 में पहला अभ्यास गद्यांश पर आधारित होता है। जबकि दूसरा अभ्यास निबंध-लेखन होता है। निबंध-लेखन किसी एक विषय पर केन्द्रित होता है। पिछले 5 वर्षों के विषय पर ध्यान डालें तो स्पष्ट होता है कि विषय आज के विद्यार्थियों के लिए बेहद प्रासंगिक होते हैं। उदाहरण के लिए क्या स्कूल में मोबाइल फोन पर प्रतिबंध लगाना चाहिए या नहीं। इस प्रकार, सभी 6 अभ्यास पढ़ने और लिखने की योग्यता का आंकलन करने में प्रमुख अभ्यास माने जा सकते हैं। इन अभ्यासों के माध्यम से पढ़ने-लिखने का आधार वह गद्यांश तो बनता ही है, साथ ही प्रश्नों को पूछते समय विद्यार्थी की भाषाई सूझबूझ के स्तर को भी परखा जाता है। इसके लिए गद्यांश में दी गई जानकारी के आधार पर तथ्यों, दृष्टिकोणों और विचारों के बीच स्पष्ट अंतर को प्रश्नों के द्वारा उठाया जाता है। विद्यार्थी के जवाब इन आपसी अंतरों को दर्शा पाएँ इसका विशेष ध्यान रखा जाता है। लिहाजा, यह प्रश्नपत्र हिंदी भाषा के सरोकारों को दिलचस्प सामग्री के द्वारा पेश ही नहीं करता बल्कि शब्दावली प्रयोग और वैचारिक विमर्श के अहम् पक्षों से भी जोड़ने का प्रयास करता है। इन दोनों ही खंडों में प्रयोग की गई हिंदी भाषा विद्यार्थियों को साहित्यिक ज्ञान न देकर प्रतिदिन के प्रयोग की हिंदी से जोड़ती है।

सुनने के प्रश्नपत्र में इन्हीं पक्षों को कई दिलचस्प वार्तालाप और जानकारी संबंधी सूचनाओं के नाट्य रूपांतरण द्वारा पूरी सामग्री को तैयार किया जाता है।

इस सामग्री को विद्यार्थी सुनते हैं और फिर प्रश्नपत्र पर अपने जवाब लिखते हैं। यह प्रश्नपत्र अंकों की दृष्टि से शेष 33 प्रतिशत पर केन्द्रित होता है। इस परीक्षा में कुल 4 अभ्यास शामिल होते हैं। पहले दो अभ्यास तथ्यों और जानकारी को सुनने पर केन्द्रित होते हैं और बाकी दो अभ्यास विद्यार्थियों को तथ्य, दृष्टिकोण और विचार के आपसी अंतर को समझने की क्षमता का प्रतिनिधित्व करते हैं। इस प्रकार दोनों ही प्रश्नपत्र हिंदी भाषा के विद्यार्थियों में तथ्य, दृष्टिकोण और विचार के आपसी अंतर को विकसित करने की क्षमता पर बल देते हैं।

दूसरी भाषा के रूप में हिंदी की परीक्षा को सफल बनाने में कैम्ब्रिज असेसमेंट की भूमिका अहम रही है। इस पाठ्यक्रम को दुनिया भर में अधिक से अधिक स्कूल अपनाएँ, इसके लिए अब तक 4 कार्यशालाएँ आयोजित की जा चुकी हैं। मुंबई के अलावा यह कार्यशाला अहमदाबाद, बेंगलुरू और लंदन में भी आयोजित की जा चुकी है। इस कार्यशाला में अब तक पाठ्यक्रम संबंधी जानकारी को विस्तार से समझाने का प्रयास किया गया है। इस पाठ्यक्रम की सफलता को देखते हुए कैम्ब्रिज परीक्षा चाहती है कि दुनिया भर के स्कूल इस पाठ्यक्रम के बारे में जानें। भविष्य में इस पाठ्यक्रय के लिए नये अभ्यास बनाने की योजना भी शामिल है। स्कूलों में अध्यापकों से लगातार संपर्क बना रहे, इसके लिए भी कैम्ब्रिज परीक्षा इंटरनेट पर एक अध्यापक चर्चा का मंच बना रही है।

साथ ही परीक्षा की कापियाँ जाँचने के कार्य को अधिक नियोजित और परीक्षा को सुगठित करने के लिए इस वर्ष से आनलाइन जाँच की प्रक्रिया का शुभारंभ हो रहा है। इस प्रक्रिया में शामिल परीक्षक मानते हैं कि यह प्रक्रिया भविष्य में परीक्षा परिणाम निकालने की प्रक्रिया ही में नहीं बल्कि हिंदुस्तान से भी परीक्षकों को जोड़ने में अहम भूमिका निभाएगी। यदि ऐसा होता है तो न सिर्फ यह परीक्षा भारत में नये परीक्षकों को इस पाठ्यक्रम से जोड़ेगी बल्कि दुनिया भर से हिंदी पाठकों की भूमिका अहम बनेगी। इससे भाषा संबंधी कई वैचारिक पक्षों पर भी चर्चा का अवसर पैदा होगा। हिंदी भाषा का दूसरी भाषा के रूप में पढ़ना या फिर तीसरी भाषा के रूप में पढ़ना, विमर्श का एक प्रश्न बन चुका है। इस पाठ्यक्रम और परीक्षा की सफलता भविष्य में इससे जुड़े कई अन्य प्रश्नों पर भी बहस को आगे बढ़ाएगी।

पिछले 5 वर्षों के अनुभव ने हमें हिंदी भाषा संबंधी कई प्रश्नों से अवगत करवाया है। इसी का नतीजा है कि कठिन और आसान हिंदी क्या है, इस बहस को हम एक परिप्रेक्ष्य में देखने की कोशिश कर रहे हैं। भारत में इस पाठ्यक्रम का स्वागत करने वालों में उन स्कूलों की संख्या अधिक है जिन्हें हम भारत में पब्लिक स्कूल और यहाँ पर प्राइवेट स्कूल कहते हैं। भारत में इन स्कूलों में हिंदी भाषा पढ़ने-पढ़ाने का चलन नहीं था, लेकिन दूसरी भाषा के रूप में हिंदी के पाठ्यक्रम ने ऐसे स्कूलों में अपनी जगह बनाई है। इसके माध्यम से ही यह अहम तथ्य भी ध्यान देने लायक है, कई सौ अध्यापकों को इन धनी स्कूलों में नौकरी मिल पाई है। लिहाजा, यह दो अर्थों में एक बड़ी विजय है कि हम हिंदी भाषा को इन स्कूलों के भीतर पहुँचा पाए हैं तो दूसरी ओर इस परीक्षा के द्वारा रोजगार के अवसर भी हिंदी भाषियों के लिए बढ़े हैं।

प्रश्नपत्र की सामग्री, भारतीय स्कूलों के लिए संतुलित नजर आती है, लेकिन वही सामग्री कुछ विदेशी स्कूलों के लिए कठिन है। हालांकि इन 5 वर्षों से इस सामग्री को बेहद संतुलित करने का भगीरथ प्रयास भी जारी है। इससे यह अंदाजा लगाना गलत माना जाएगा, यदि आप सोचते हैं कि भारतीय स्कूलों में विद्यार्थी ज्यादा हिंदी पढ़ते हैं। वास्तविकता इससे अलग है। क्योंकि ये विद्यार्थी भारत में रहते हैं और उन्हें सुनने और बोलने के पर्याप्त अवसर मिलते हैं, इसलिए ये विद्यार्थी विदेशी विद्यार्थियों की अपेक्षा ज्यादा बेहतर प्रदर्शन करते हैं। यहाँ पर यह जोड़ना भी जरूरी है कि विदेशों में रहने वाले सभी विद्यार्थियों के लिए परीक्षा कठिन नहीं होती। अरब देशों में रहने वाले विद्यार्थियों का प्रदर्शन भी श्रेष्ठ रहा है।

इसी वर्ष 2011, मार्च में बेंगलुरू में कार्यशाला का आयोजन किया गया। इस कार्यशाला का उद्देश्य सदैव की तरह दक्षिण भारतीय स्कूलों के अध्यापकों को पाठ्यक्रम के बारे में जानकारी देना था। कार्यशाला संचालक ऐश्वर्ज कुमार ने बताया कि कार्यशाला में 30 अध्यापकों ने भाग लिया। उन्होंने बताया कि कैसे दक्षिण भारत के स्कूलों में बड़ा परिवर्तन आया है कि अब हिंदी भाषा के प्रति पहले जैसा विरोध नहीं है। अधिकांश अभिभावक चाहते हैं कि उनके बच्चे हिंदी भाषा सीखें। यही नहीं हिंदी सिखाने वाले अध्यापकों की माँग भी बढ़ रही है। हिंदी भाषा

और हिंदी के पाठ्यक्रम के लिए यह शुभ समाचार है।

द्वितीय भाषा के रूप में हिन्दी की परीक्षाएँ विश्व के कई देशों में हो रही है। इसका सारा प्रबंधन कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय के एक अंग द्वारा होता है। प्रश्नपत्रों के अभिकल्पन से लेकर परिणामों की घोषणा आदि इसी एक अंग का काम है। इस अंग में कुल मिला कर दो परीक्षक सारे समय और 15 परीक्षक परीक्षा के बाद काम करते हैं। इस विषय को इकाई के प्रबंधक द्वारा नियोजित किया जाता है। प्रश्नपत्रों की तैयारी तथा तकनीकी पक्षों का ध्यान रखने के लिए 2 मुख्य परीक्षक हैं। इनके अतिरिक्त लगभग 14 परीक्षक हैं, जिनका काम होता है कापियों को जाँच कर प्राप्त अंकों को केन्द्र तक सही समय पर भेजना। सारा क्रम बड़ा ही जटिल है किन्तु अब तक कोई समस्या नहीं आई है। इस कार्य को और अधिक सुगढ़ बनाने के लिए, जैसा कि पहले बताया जा चुका है, इस वर्ष से 'आन लाइन मार्किंग' का प्रयोग किया जा रहा है। इसकी सफलता से इस इकाई को और अधिक व्यापक बनाया जा सकेगा।

हिन्दी भारत की भाषा एवं भारतीय संस्कृति का प्राण है। देश को चाहिए कि इसको कोने-कोने में पहुँचाने का प्रयास करे ताकि बच्चे इससे जुड़ कर भाषा का ज्ञान ले सकें। भारत आर्थिक दृष्टि से मजबूत हो रहा है और विश्व की निगाहें इस पर लगी हैं। इस कारण अधिक से अधिक लोग हिन्दी सीखना चाहेंगे और सीख भी रहे हैं, इस दृष्टि से भी इस इकाई को बढ़ावा मिलना चाहिए। इकाई के प्रचार-प्रसार में भारतीय दूतावासों की भूमिका अहम हो सकती है।

# उच्च हिंदी प्रशिक्षण में वेब प्रयोग
## (सोआस)

मैं सोआस में हिंदी साहित्य और भारत के सांस्कृतिक और साहित्यिक इतिहास के साथ-साथ उच्च स्तर की हिंदी कीं कक्षा भी पढ़ाती हूँ, ऐश्वर्ज कुमार जी के साथ इस प्रस्तुति में साहित्य शिक्षण को किनारे करके मैं अपने भाषाशिक्षण के अनुभवों और शिक्षा पद्धति पर बात करना चाहती हूँ। यह लगातार बदलती हुई प्रक्रिया है, जिसमें हम नए-नए प्रयोग और विद्यार्थियों की बदलती रुचियों को शामिल करने की कोशिश करते रहते हैं। उच्च स्तर पर हिंदी पढ़ाते हुए संतोष तो बहुत मिलता है और उसकी संभावनाएँ भी असीम हैं, मगर इसमें कई कठिनाइयाँ और समस्याएँ भी सामने आती हैं।

प्राथमिक स्तर पर हिंदी पढ़ाने का कार्यक्रम काफी हद तक निर्धारित है। आप चाहे जो भी तरीका अपनाएँ, बुनियादी व्याकरण, रोजमर्रा की बोली और मुहावरे, आम जीवन की शब्दावली उसमें सब शामिल होंगे। विद्यार्थी को frustraion तो हो सकता है कि वह कितना कम बोल पा रहा है, फिर भी ध्यान दिलाये जाने पर वह आसानी से यह महसूस करेगा कि वह कितना सीख रहा है। यानि progression, प्रगति को देखना और दिखाना आसान रहता है।

फिर प्राथमिक हिंदी शिक्षण के लिए सामग्री पर्याप्त मात्रा पर मिल जाती है। व्याकरण की कई किताबें हैं, drills भी ज्यादा पुराने नहीं पड़ जाते और हर शिक्षक और शिक्षण केन्द्र के पास वे इकट्ठे होते जाते हैं। कई विश्वविद्यालयों ने हिंदी के लिए web सामग्री भी बनाई है :

http://www.avashy.com/hindiscripttutor.htm

A door into Hindi (Afroz Taj, North Carolina Center for South Asia Studies):

http://taj.chass.ncsu.edu/

Hindi-Urdu Flagship (R. Snell, U of Texas, Austin, formerly SOAS):

http://hindiurduflagship.org/resources/learning-teaching/hindi-learning-materials/

वे भी आम तौर पर प्राथमिक स्तर की हिंदी शिक्षा के लिए बनाई गई हैं। University of Pennsylvania का पाठ्यक्रम 'नई दिशाएँ, नए लोग' अब वेब पर भी उपलब्ध है, और वह मध्यम स्तर के शिक्षण के लिए बहुत ही उपयोगी है। यह सामग्री 1988 में तैयार की गयी थी, तो पोषक, भाव, वगैरह सब उस समय के हैं, जो दूसरे कारणों से भी उपयुक्त हो सकते हैं। मसलन 14वीं कक्षा की एक सीन में हम लोग के कार्यक्रम का एक दृश्य मिलता है, जो मैं शुरुआती TV सोज ओपेरा के नमूने के तौर पर दिखाती हूँ, देखे :

http://www.southasia.upenn.edu/hindi/Volume2/index.html

उच्च स्तर के शिक्षण को लेकर मैं मुख्य रूप से तीन ही बातें सामने रखना चाहती हूँ :

1- प्रगति का साफ रास्ता न दिखने की वजह से शिक्षक को पाठ्यक्रम की दिशा और विद्यार्थी को आत्मविश्वास प्रदान करने के लिए दूसरी तरह की विधि को अपनाने की जरूरत पड़ती है। मेरी नजर में उच्च स्तर के शिक्षण के मूलतत्व ये हैं : भाषा शैलियों की विविधता, अलग-अलग विषयों पर विशिष्ट शब्दावली और हर तरह की सामग्री को समझने में दक्षता। सोआस की कक्षा में हम आखिरी साल में इन विषयों और भाषा शैलियों को शामिल करते हैं :

1- औपचारिक/अनौपचारिक शैली (पत्र व्यवहार)

2- अंग्रेजी/हिंदी वाक्य संरचना में फर्क

3- भाषा वैज्ञानिक भाषा शैली : 'अव्यक्त कथन', और उसका ठोस उदाहरण देने के लिए कृष्णा सोबती के उपन्यास 'दिलो दानिश' का एक प्रसंग

4- मनोविज्ञान की शब्दावली : दो पत्रिकाओं की चिट्टियाँ तथा लगे रहो मुन्नाभाई में मुन्ना भाई की मनोचिकित्सक से मुलाकात

5- हिन्दू धर्म और मीडिया : बाबा रामदेव का एक वीडियो, वेब पर कोई व्रत कथा, और दो फिल्में : जय संतोषी माता तथा अमर अकबर एंथोनी में चमत्कार का सीन

6- उर्दू की शैली तकल्लुफ और तहजीब की शब्दावली (शतरंज के खिलाड़ी के सन्दर्भ में)

7- हिंदी/अंग्रेजी अखबारों की खबरों में फर्क और हिंदी अखबारों की रिपोर्टिंग की भाषा शैली

8- गालियाँ (प्रयोग और प्रयोग पुस्तक से)

9- दलित और मीडिया : बसपा का वीडियो और शब्दावली, अमर चित्रकथा की अम्बेडकर जीवनी, लगान का दृश्य

10- राजनीति की भाषा : नुक्कड़ नाटक (हत्यारे, हल्ला बोल का दृश्य), हिंदी फिल्मों के गाने (दुनिया में आये हैं, नन्हें मुन्ने बच्चे, ये महलों... की दुनिया) और संवाद (कुली में अमिताभ का भाषण)

इन विषयों का अपना कोई तय क्रम हो, ऐसा नहीं है तो विद्यार्थियों को हर बार समझाना पड़ता है कि इस विषय और इस सामग्री के पीछे कौन सा मकसद है। और फिर कक्षा के अंत में भी उनको याद दिलाना पड़ता है कि उन्होंने इस कक्षा में क्या-क्या सीखा है।

2- दूसरी बात है कि हर विषय के लिए तरह-तरह की सामग्री को पेश करने की जरूरत है। पुराने ढंग के 'रीडरों' में सिर्फ लिखित पाठ शामिल होते थे। मगर आजकल हम मानते हैं कि विद्यार्थी को कक्षा में शामिल करने के लिए उसका ध्यान जगाये रखने के लिए और उसकी बोलने और समझने की क्षमता बढ़ाने के लिए उसके सामने ज्यादा से ज्यादा जीवन्त, 'चलती फिरती' सामग्री को पेश करने की जरूरत है। साथ ही, हर कक्षा में विविधता की सख्त जरूरत होती है ताकि उनका ध्यान न भटके। तो हम आजकल छोटे-छोटे लिखित पाठों के साथ-साथ फिल्मों, टीवी कार्यक्रमों और यू ट्यूब के वीडियों का ज्यादा इस्तेमाल करते हैं। हर सामग्री के साथ कोई न कोई अभ्यास या क्रिया जुड़ी रहती है :

यहाँ मैं दो ही नमूने पेश करूँगी :

पहला नमूना है दलित और मीडिया का, इस विषय की कक्षा में तीन तरह की सामग्री विद्यार्थियों के सामने रखती हूँ :

1- http://www.youtube.com/watch?v=-IzpWzepMLo

इस में विद्यार्थियों का पहला काम समझने का है (filling the blanks + सवालों का जवाब) दूसरा काम है (worksheet) role-play, जिसके मार्फत विद्यार्थियों

को इस शब्दावली और इस दृष्टिकोण और भाषा 'चरित्र' का अभ्यास करना पड़ता है। उनसे कहा जाता है कि वे कल्पना करें कि वे सचमुच मायावती, या पत्रकार, या बसपा का कार्यकर्ता हैं और उसी शैली में बात करें, उनको इसमें काफी मजा भी आता है (होम्योर्क भी इस तरह का है)।

विद्यार्थियों से सवाल :

अनुसूचित जाति और दलित में मायावती का चिन्तन<br>
क्या फर्क है? मुख्य मुख्य बिन्दुओं को गिन लीजिए:<br>
कुमारी मायावती किस पृष्ठभूमि से –<br>
आई हैं? क्या वह साधारण या<br>
असाधारण पृष्ठभूमि से हैं?

Role-plays:

1. कुमारी मायावती से बातचीत

Work in pairs : one of you be Mayavati, the other a journalist interviewing her who asks:

Can you tell me something about your background?

How did you decide to enter politics?

Despite reservation (आरक्षण) do you think that Dalits are still facing discrimination (भेदभाव)?

Have things changed now that there is a Dalit party (BSP)? What difference has it made?

In the past you have made a government in U.P. with the BJP: aren't they manuvadi?

They say that you are using your power to take enormous bribes and you have accumulated lots of diamonds : does this not damege the image of Dalits?

2- दलित कार्यकर्ता से बातचीत

Work in pairs : one of you be a Dalit activist, the other a journalist interviewing him/her who asks :

How long have you been an activist?

Why did you become one?

When did you first hear about Ambedkar?

What do you think of Mayavati?

In the past Mayavati has allied herself with the BJP, which is considered a party of savarnas: wasn't it a betreyal?

What difference do you think Mayavati has made to Dalit women?

They say she is immensily rich, loves diamonds:: does this not damage the image of Dalits?

भाषा का अभ्यास करने के साथ-साथ विद्यार्थी आजकल की भारतीय राजनीति से भी परिचित हो जाते हैं, हिंदी के जरिये यह मेरी शिक्षण पद्धति का मूल सिद्धांत है। विश्वविद्यालयों के विद्यार्थियों के लिए मेरा मानना है - यह बेहद जरूरी है कि वे भाषा-शिक्षण और विषय की पढ़ाई को अलग-अलग न मानें। अक्सर कहा जाता है कि भाषा किसी समाज और संस्कृति को समझने के लिए जरूरी होती है। फिर भी आजकल विश्वविद्यालयों में भारत के समाज और संस्कृति की पढ़ाई पूरी तरह अंग्रेजी के माध्यम से हो रही है। तो विद्यार्थी के मन में, किसी न किसी तरीके से, यह विचार जरूर पैदा होता होगा कि भाषा पर इतनी मेहनत करने की भला क्या जरूरत थी? या भाषा, लोगों से सिर्फ बातचीत करने के लिए होती है, तो मेरा मानना है कि भाषा और सामाजिक/सांस्कृतिक विषयों को साथ-साथ पढ़ाना चाहिए।

इस कक्षा की दूसरी सामग्री है लगान का दृश्य :

http://www.youtube.com/watch?v=Jshswo0d82Y&feature= fvwrel

कुमारी मायावती तो बसपा का वीडियो हैं। मगर मुख्य धारा की मीडिया में दलितों को किस ढंग से दिखाया गया है? (कक्षा में विद्यार्थियों से सुजाता का कोई गाना या दृश्य भी दिखाती हूँ) लगान का दृश्य इस विषय पर बहस करने का अच्छा बहाना पेश करता है। विद्यार्थियों से कचरा के नाम, उसके लूला होने, उसके व्यवहार को लेकर बातचीत होती है। साथ ही गाँव की बोली उनके लिए मुश्किल पड़ती है तो उसकी भी थोड़ी चर्चा होती है।

इस कक्षा में तीसरी सामग्री है अमर चित्रकथा डॉ. अम्बेडकर की जीवनी। इसमें दो तरह के काम शामिल हैं। एक तो विद्यार्थियों को हरेक प्रसंग को संक्षेप

में बताना पड़ता है। फिर उनसे पूछा जाता है कि कॉमिक में बाबा साहेब अम्बेडकर की कैसी छवि उभर कर आती है? वर्ग-संघर्ष को किस रूप में पेश किया गया है? गांधी जी से मतभेद को किस ढंग से दिखाया गया है? (पूना पेक्ट का प्रसंग उन्होंने शायद इतिहास की कक्षा में पढ़ा होगा) संविधान में उनकी महत्वपूर्ण भूमिका का कोई जिक्र इसमें क्यों नहीं मिलता? यानि, कामिक की गुप्त और प्रकट विचारधारा को लेकर सवाल।

3- तीसरी बात जिस पर मैं जोर डालना चाहती हूँ, यह है कि उच्च्य स्तर के हिंदी विद्यार्थियें को हर विषय, हर परिस्थिति, हर तरह के पाठ से निपटना चाहिए। हम मानते हैं कि वे गलतियाँ तो करेंगे ही, गलत लिंग का प्रयोग करेंगे या बीच-बीच में अंग्रेजी शब्दों को डालेंगे, यह तो सभी लोग करते हैं। मगर हम विद्यार्थियों के साथ इस पर बहुत जोर देते हैं कि जो पाठ या विषय हम उनके सामने रखते हैं, वे सब असली हैं, आजकल के समाज और संस्कृति से जुड़े होते हैं। और वे इस मुकाम पर पहुँचे हैं कि उनको किसी भी विषय पर अपनी राय देने की स्थिति में होना चाहिए, और हिंदी में भी उनको सोचना चाहिए और हिंदी में भी लोग सोचते हैं। हिंदी में सोचने के अपने तौर तरीके, अपने मुहावरे भी होते हैं।

राजनीति इस बात का अच्छा नमूना होती है। एक तरफ हम उनको राजनीतिक शब्दावली सिखाते हैं। (कुमारी मायावती में जिसका काफी प्रयोग हो चुका है)। मगर जो ज्यादा दिलचस्प काम है, वह है हिंदी में राजनीति पर टिप्पणी करने के कौन से तरीके और माध्यम हैं? कौन से मुहावरे कारगर होते हैं?

तो 'राजनीति' वाले विषय में हम नुक्कड़ नाटक पढ़ते हैं (सफदर हाशमी के हत्यारे) और उसको पढ़ने के पहले हल्ला बोल का यह दृश्य देखकर उस पर बातचीत करते हैं।

दूसरी कक्षा में मुख्यधारा की फिल्मों में राजनीति के चित्रण पर चर्चा करने के सिलसिले में कुछ गानों और फिर संवादों पर बात करने आते हैं। मनमोहन देसाई की फिल्म कुली में रैली का दृश्य इस सन्दर्भ में बहुत जोरदार है। पहले हम इस पर चर्चा करते हैं कि इस फिल्म में मजदूर की कैसी छवि पेश की गई

(मेहनती, ईमानदार, एक दूसरे को सुख-दुःख बाँटने वाले, होशयार, खुदा/भगवान पर ईमान रखने वाले आदि : गाना 'सारी दुनिया का बोझ हम उठाते हैं देखें :)

http://www.youtube.com/watch?v=8zsh0dXUyQc&feature= रेलातेद 2:31

दुर्भाग्य से आजकल यूट्यूब से पूरी फिल्म हटाई गयी है (सिर्फ गाने उपलब्ध हैं) मगर दृश्य से ज्यादातर हिंदी भाषा-भाषी परिचित ही होंगे। इसमें भी हम दो तरह के काम करवाते हैं। पहला काम है comprehension (fill in the blanks) (दूसरा काम है भाषा शैली, मुहावरों और rhetoric पर ध्यान और बातचीत : हम विद्यार्थियों से पूछते हैं कि यह भाषा इतनी प्रभावशाली क्यो हैं?

FILL in the blanks :

इकबाल भाई जिंदाबाद।

जिंदाबाद तो हैं आप लोग, जिन्होंने आज मुझे इन अमीरों के ......

एक रेलवे प्लेटफार्म से उठाकर इलेक्शन प्लेटफार्म पर खड़ा कर दिया।

हाँ, पूछिए, क्या सवाल पूछना चाहते हैं आप?

तुम, एक गरीब, गँवार, अनपढ़..... पूरी कर सकते हो? इनकी समस्याएँ..........? इनको........ दिल सकते हो?

कोई माई के लाल को दो वक्त की रोटी नहीं दिला सकता है

क्योंकि........ दिए हैं और कहा है कि चीर दे जमीन और सीधा निकाल अपने हिस्से की रोटी, मगर आप? आप लोग हम गरीबों का सीना चीर कर हमारे भी हिस्से की रोटी निकाल लेते हैं। हमारा खून निकाल लेते हैं और ......... .......... तो हमारी आत्मा भी निकालकर बेच देंगे। (तालियाँ)

तुम समझते हो यह सारी दुनिया तुम्हारे कन्धों की ............ पर चलती है? एक करोड़ गरीबों का पेट............. इसीलिए मान लो, दुनिया का कोई भी काम..............

कैसे नहीं हो सकता? कभी किसी अमीर को सड़क पर गोली खाकर मरते हुए सुना है? है वो गरीब ही होता है जो अपने सीने में गोली खाकर........ ......... बढ़ाता है। यह दुनिया अमीरों से नहीं, हम जैसे लोगों से चलती है।

क्योंकि ताज महल से लेकर एक छोटा घर भी मेरे जैसे एक गरीब भाई ने अपने कंधों पर पत्थर ढोकर बनाया है, किसी अमीर ने नहीं। अमीरों ने तो जो कुछ भी बनाया है, वह रिश्वत या रिश्वत के बलबूते पर बनाया है। कोई दस रुपये में वोट खरीद लेता है। सौ रुपये में कोई अपनी अर्जी पास करवा देता है। हजार रुपये में कोई इम्तहान पास करवा देता है। लाखों रुपये देकर ये अपना टेंडर पास करवा लेते हैं। और मैं कहता हूँ कि सबसे पहले इन रिश्वतखोरों को फेल करो तब जाकर कोई गरीब पास होगा।

.... क्या इसका जवाब मुझे भी देना होगा?

तो इस प्रस्तुति में मेरे कहने का तात्पर्य यह रहा है कि उच्च स्तर के हिंदी शिक्षण में शिक्षक के पास आजादी तो बहुत है। मगर शिक्षण को प्रभावशाली बनाने के लिए प्रगति, माध्यम की विविधता और हर पाठ, हर सामग्री के साथ कोई न कोई अभ्यास जोड़ना जरूरी होता है। वेब पर सामग्री तो बहुत मिलती है। मगर उसको एक ढाँचे में रखना, उसका सशक्त प्रयोग करना शिक्षक पर निर्भर होता है।

फ्रंचेस्का ओर्सिनी

SOAS

वेब पर उपलब्ध हिंदी पढ़ाने की सामग्री :

Australian National University Hindi Laguage Studies

Introductory Hindi Course Materials (Barz, Richard K et al.)

Michigan State University SAI\LRC : Hindi-Urdu Blended Teaching Resources (hindiurdu.net)

North Carolina State University : A Door into Hindi (A froz Taj)

Syracuse University Hindi/Urdu Conversation Lessons (Tej Bhatia, Jishnu Shankar)

The UCLA Language Materails Project's Hindi Teaching Resources : Language Profile, links, citations

University of Chicago's South Asia Language Resource Center -Linguistic Survey of India'a Hindi samples (DSAL)

University of Pennsylvania's Web-based Hindi Materials

-nai disae nae log web-based Hindi tutorials

Lesson containing sare jahan se accha

UT Austin Hindi-Urdu Flagship

- Supplementary Hindi Learning Materials by Rupert Snell to his Teach Yourself Hindi books

-Foreign Language Teaching Methods

Wesleyan Univertisy : A Virtual Village (Arampur, Bihar) by Peter Gottchalk and Matthew Schmalz

# अन्तरराष्ट्रीय स्तर पर हिंदी शिक्षण–प्रशिक्षण की आवश्यकताएँ

– डॉ. कृष्ण कुमार

वैश्वीकरण-भूम्ण्डलीकरण के इस दौर में विश्व सिमट रहा है। व्यापार की सीमाएँ बढ़ रही हैं और विचार-विनिमय के धरातल बदल रहे हैं। इन सबके बीच समन्वय-एकता की संवाहिका भाषा का भी विकास हो रहा है। भाषा के साथ जुड़ी संस्कृति भी स्थानान्तरित हो कर विश्वसमाज को और अधिक सशक्त बना रही है। यद्यपि आकड़ों के अनुसार विश्व में 196 स्वतंत्र राष्ट्र हैं किंतु राजनीति के कारण अमेरिका केवल 195 को ही मानता है। उसकी सूची में ताईवान सम्मिलित नहीं है। इनमें से 192 संयुक्त राष्ट्रसंघ के सदस्य हैं। डॉ. जयंती प्रसाद नौटियाल (1) के आकड़ों के अनुसार 63 राष्ट्रों में हिंदी बोली-समझी जाती है जो अपने आप में एक महत्वपूर्ण तथ्य है। जहाँ एक ओर भारत के लिए यह गर्व एवं आत्मसम्मान की बात है वहीं यह निहित परिवर्तनशीलता के कारण हिंदी शिक्षण-प्रशिक्षण के मानकीकरण के लिए बड़ी समस्या भी बन जाती है। इस अन्तरराष्ट्रीय आयाम के कारण हिंदी को अनेक चुनौतियों का सामना करना पड़ता है।

भाषा और संस्कृति का आपस में आत्मा-शरीर, जल-सरिता का सम्बंध होता है। दोनों अविभाज्य इकाई हैं। हिंदी अब स्वतंत्र होकर विश्व के भाषायी आकाश में फैल रही है। इस कारण इसके स्थायित्व को सुरक्षित रखने के लिए अनेकानेक आवश्यकताओं की पूर्ति अनिवार्य हो जाती है। उपभोक्ताओं के बिखराव के कारण हिंदी को सर्वग्राह्य बनाने के लिए यह आवश्यक है कि हिंदी शिक्षण-प्रशिक्षण को स्थानीय संस्कृति से जोड़ कर उपयुक्त पाठ्यक्रम का निर्माण किया जाय। संस्कृति से कटा हुआ कोई भी पाठ्यक्रम भाषा के साथ न्याय नहीं कर सकता है। भूमण्डलीकरण के दौर में विश्व के अनेकानेक लोग हिंदी सीखना चाहते हैं और यह केवल इसलिए नहीं कि ऐसा करने से उन्हें कोई आर्थिक लाभ होगा वरन् इसलिए कि वे भारत की सांस्कृतिक-पारम्परिक सम्पदा को सही तौर

पर जानना-समझना चाहते हैं। वे भारत से प्यार करते हैं।

बहुराष्ट्रीय विविधताओं के कारण कोई एक पाठ्यक्रम सभी देशों के लिए उपयुक्त नहीं हो सकता, क्योंकि :

1. स्थानीय भाषा भिन्नता के कारण
2. स्थानीय संस्कृति भिन्नता के कारण

अतः विदेशी भाषा के रूप में हिंदी शिक्षण के लिए एक बीज पाठ्यक्रम का निर्माण कर उसे विभिन्न देशों के लिए उपयुक्त बनाना होगा। अभी तक हिंदी का पठन-पाठन- शिक्षण निम्नरूप में होता रहा है :

1. प्रथम भाषा के रूप में
2. द्वितीय भाषा के रूप में

अभी तक विश्व के विभिन्न कोनों में हिंदी के शिक्षकों द्वारा स्वनिर्मित पाठ्यक्रमों का प्रयोग द्वितीय भाषा के रूप में होता रहा है। किंतु ऐसी स्थितियाँ, विशेष रूप से विदेशों में, उत्पन्न होती रही हैं जहाँ विद्यार्थियों को हिंदी सीखने में कठिनाइयाँ आती रही हैं। क्योंकि हिंदी उनकी द्वितीय भाषा न होकर तृतीय या चतुर्थ भाषा है। अतः अब यह नितांत आवश्यक हो गया है कि एक नए पाठ्यक्रम का निर्माण हो जिसमें इस पक्ष-सत्य का पूरा ध्यान रखा जाय। एक मानक बीज हिंदी पाठ्यक्रम बनना चाहिए ताकि सबकी हिंदी का स्तर लगभग सामान्य हो। वैश्वीकरण के दौर में जब लोग आसानी से देशों की सीमाओं को पार करते हैं तब शिक्षार्थी भी ऐसा कर सकते हैं। अतः जैसा अब विश्वविद्यालयों में होने लगा है कि विद्यार्थी अपने कोर्स को स्थानान्तरित कर लेते हैं। उसी प्रकार की सुविधा अब हिंदी के लिए भी उपलब्ध करानी होगी। इस प्रक्रिया को 'क्रेडित ट्रांन्सफर' कहते हैं। यह हिंदी शिक्षण-प्रशिक्षण के मानकीकरण से ही सम्भव हो सकता है। ऐसी परियोजना का विश्वहिंदी समाज स्वागत ही करेगा। आजकल विद्यार्थी हिंदी का प्राथमिक ज्ञान, अपने-अपने देशों में लेकर भारत आते हैं हिंदी को परिमार्जित करने के लिए। ऐसा करने में उनको अपने ही देश में दो वर्षों तक पढ़ना पड़ता है। पाठ्यक्रमों का मानकीकरण न होने के कारण उनमें से कुछ को पुनः उसी सामग्री से गुजरना पड़ता है, जिससे समय और धन का नुकसान होता है। विश्व

में हिंदी शिक्षण-प्रशिक्षण के मानकीकरण का दायित्व विदेश एवं गृह मंत्रालयों के साथ विश्व हिंदी सचिवालय, केन्द्रीय हिंदी संस्थानों और अन्तरराष्ट्रीय महात्मा गांधी विश्वविद्यालय जैसे संगठनों का हो जाता है। इस विषय पर काफी गम्भीरता से प्रोफेसर जगन्नाथन ने एक प्रस्ताव रखा था। उन्होंने तो उच्च शिक्षा में मानकीकरण की आवश्यकता पर बल दिया था किंतु इस प्रक्रिया को प्रथमा, मध्यमा एवं उत्तमा स्तर के हिंदी शिक्षण-प्रशिक्षण के लिए भी करने पर ही अभीप्सित परिणाम मिलने की संभावना बन सकती है। जगन्नाथन जी का कहना है कि- "उच्च शिक्षा के स्तर पर हिंदी के शिक्षण में मानकीकरण की सबसे बड़ी आवश्यकता विदेशी भाषा हिंदी के शिक्षण के क्षेत्र में है, क्योंकि यहाँ 'मानक' के निर्माण और नियमन के लिए कोई अभिकरण नहीं है।"

मशीनी उत्पाद की गुणवत्ता का सूचक इसकी एकरूपता और समानता होती है और यह उत्पादन प्रक्रिया के मानकीकरण से ही सम्भव होता है। इससे विवाद घटता और व्यापार बढ़ता है। यही होगा अगर विश्व स्तर पर हिंदी शिक्षण-प्रशिक्षण का मानकीकरण हो जाता है। कार्य कठिन अवश्य है किंतु असम्भव नहीं। दीर्घकालिक सुपरिणाम प्राप्ति के लिए यह आवश्यक है कि सामूहिक चेतना-विवेक को संग्रहीत कर इस कार्य में लगाया जाय। ऐसा होने से हिंदी शिक्षण-प्रशिक्षण का सही मूल्यांकन एवं भविष्य के लिए सम्यक् दिशा-निर्देशन भी होगा।

ऐसे मानकीकरण के लिए सुझाए गए संस्थानों के तत्वावधान में एक स्थायी समिति का निर्माण होना चाहिए। इस कार्य को गति प्रदान करने के लिए निम्न बिन्दुओं पर विचार किया जा सकता है :

1. विश्व के सभी राष्ट्रों में हिंदी में कार्यरत संस्थाओं एवं विद्यालयों से प्रतिनिधि चुने जाएँ। इस कार्य को भारतीय दूतावास या कौंसुलावास के माध्यम से संयोजित करना चाहिए।

2. केन्द्रीय हिंदी संस्थान आगरा के निर्देशन पर प्रथम, द्वितीय और तृतीय भाषा के रूप में हिंदी पाठ्यक्रम का मानकीकरण करना चाहिए।

3. पाठ्यक्रम में भारतीय-स्थानीय संस्कृति पर आधारित सामग्री होनी चाहिए।

4. जहाँ तक सम्भव हो सके पाठ्यक्रमों का निर्माण स्थानीय हिंदी विद्वानों द्वारा

ही होना चाहिए, जिससे भाषा सम्बंधी तमाम समस्याओं का निवारण सरलता से हो सके।

5. हिंदी अध्यापकों के प्रशिक्षण मानकीकरण के लिए दूतावासों में हिंदी शिक्षण-प्रशिक्षण अधिकारी की नियुक्ति होनी चाहिए जो इस कार्य को ठीक से नियोजित कर सके।

6. परीक्षा प्रश्नपत्र एवं मूल्यांकन के लिए कैंब्रिज विश्वविद्यालय बोर्ड का अनुकरण किया जा सकता है।

7. सभी परीक्षार्थियों को प्रथमा, मध्यमा या उत्तमा के प्रमाणपत्रों को केन्द्रीय हिंदी संस्थान आगरा द्वारा दिया जाना चाहिए।

8. समय-समय पर पूरी प्रक्रिया का निरीक्षण एवं पुनर्मूल्यांकन भी होना चाहिए।

9. विदेशों में हिंदी शिक्षण में संलग्न अध्यापकों का सम्मान करते हुए विदेश मंत्रालय द्वारा कुछ मानदेय भी निर्धारित होना चाहिए।

10. यथासम्भव प्रौद्योगिकी, वेब एवं मोबाइल फोन का प्रयोग कर युवापीढ़ी के लिए सारे कार्यक्रम को उपयोगी एवं आकर्षक बनाना चाहिए।

## अन्तरराष्ट्रीय हिंदी शिक्षण–प्रशिक्षण के पाठ्यक्रमों में संस्कृति

अधिकतर हिंदी पाठ्यक्रमों में संस्कृति का अभाव रहता है, जिसके कारण भाषा का प्रभाव भी अधूरा ही रह जाता है। यह बात और भी अधिक आवश्यक हो जाती है जब हम भारत से बाहर हिंदी शिक्षण-प्रशिक्षण की बात करते हैं। मेरे विचार से अंग्रेजी के प्रचार-प्रसार में यही गलती ब्रिटिश काउंसिल ने की। अंग्रेजी अपने दबाव के कारण निष्प्राण आगे बढ़ती गई। भारत को इससे बचना चाहिए और सायास प्रयास करना चाहिए कि हिंदी के पाठ्यक्रमों का निर्माण करते समय भाषा के साथ-साथ भारत-स्थानीय संस्कृति गुंफित रहे। ऐसा करने से हिंदी सजीव एवं अर्थप्रद रहेगी। टोक्यो विश्वविद्यालय, जापान, ने हिंदी पाठ्यक्रम का निर्माण करते समय इस बात का पूरा ध्यान रखा। प्रोफेसर कृष्ण दत्त पालीवाल जी बताते हैं कि किस प्रकार जापान में भारतीय संस्कृति के प्रतीकों का समावेश हिंदी शिक्षण में किया गया है। वह लिखते हैं– ''जापान के अधिकांश विश्वविद्यालयों में हिंदी पाठ्यक्रमों के निर्धारण में प्रोफेसर दोई और प्रोफेसर तोशियो तनाका की भूमिका

का विशेष महत्व रहा है। पाठ्यक्रम समिति के परामर्शदाता के रूप में इन विद्वानों ने यह मानकर पाठ्यक्रम-निर्धारण किया है कि भाषा का सम्बंध संस्कृति से बहुत गहरा है। संस्कृति, मिथक-दर्शन, साहित्य सभी को मिला कर ही पाठ्यक्रम का निर्माण होना चाहिए। इसी दृष्टिकोण को अपनाने के कारण जापान में स्नातक स्तर पर हिंदी पढ़ने वाला विद्यार्थी हिंदी भाषा के व्याकरण के साथ रामायण-महाभारत, पंचतंत्र और रामचरित मानस के बाद मोहन राकेश तक को पढ़ता है। भारत के तीज-त्योहार, पर्व, व्रत, तीर्थ, पूजा-उपासना के केन्द्र, नदियों, पर्वत, देवी-देवताओं शिव चरित सभी के विषय में जानकारी पाता है।" कहना न होगा कि जापान में हिंदी शिक्षण का अर्थ है- भाषा के साथ भारतीय संस्कृति-परम्परा साहित्य का ज्ञान।" मेरे विचार से भारतीय संस्कृति के साथ स्थानीय संस्कृति का समावेश भी पाठ्यक्रम में होना चाहिए, विशेष रूप से बच्चों को पढ़ाने में।

## प्रौद्योगिकी के युग में हिंदी शिक्षण

बीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध से विज्ञान एवं सूचना प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में निरंतर विस्फोट होता रहा है। नए-नए उपकरणों से जहाँ एक ओर सुविधाएँ एवं सम्भावनाएँ बढ़ी हैं वहीं इनसान आलसी होते हुए उन पर आश्रित होने लगा है। कुछ समय के लिए अगर बिजली चली जाती है या इंटरनेट की सुविधा नहीं मिलती है तो जीवन थम सा गया, लगने लगता है। किंतु आज बच्चों और नवयुवकों को इनके माध्यम से बहुत कुछ पहुँचाया भी जा सकता है, यह सत्य सिद्ध हो चुका है। प्रौद्योगिकी का प्रयोग हमारे जन-जीवन में कितना समा चुका है इसको समझने के लिए अमेरिका के उस दृश्य को ध्यान में लाएँ जब वहाँ के एक बड़े स्टोर में कुछ समय के लिए बिजली चली गई थी और सारे उपकरण विफल हो गए थे। स्टोर में हंगामा-लूट का वातावरण छा गया था। ध्यान देने की बात यह है कि इन उपकरणों के आने के पहले भी तो सारा काम होता ही था। अंतर केवल इतना आया कि अब मानसिक रूप से अंकगणित का प्रयोग भूल चुके हैं। ऐसे दृश्य आज के समय में सामान्य हो गए हैं, जहाँ प्रौद्योगिकी पर ही सारा काम-काज आश्रित हो गया है।

बदलते हुए समय में हमारी सोच तथा कार्यप्रणाली भी बदल रही है। अतः

हमको हिंदी शिक्षण-प्रशिक्षण के क्षेत्र में भी परिवर्तन लाना ही पड़ेगा। तख्ती और स्लेट या ब्लैकबोर्ड का समय समाप्त हो चुका है। मुझे याद है जब 1964-65 में जब मैं पढ़ा कर घर आता था तो सर के सारे बाल चाक की सफेदी से सफेद होते थे और घर पहुँचते ही नहाना पड़ता था। अब यह सारे काम प्रौद्योगिकी के माध्यम से होते हैं और पहले की अपेक्षा अधिक सुचारु रूप से होते हैं। राजेश के जैन लिखते हैं कि- "परम आवश्यकता है कि हिंदी शिक्षण की आधुनिक प्रणाली में टेक्नोलॉजी का समुचित प्रवेश किया जाये। उनके बीच की परस्पर दूरी को कम किया जाए। मात्र टेक्नोलॉजी में हिंदी को न लाया जाये वरन् हिंदी में भी टेक्नोलॉजी को लाया जाये। और यह काम रचनात्मक साहित्य के माध्यम से हो सकता है।" कहने का अर्थ है कि प्रौद्योगिकी और सूचनातंत्र का अधिक से अधिक प्रयोग होना चाहिए।

जहाँ एक ओर विश्व में पुस्तकों की बिक्री कम हुई है वहीं पुस्तकों का पठन बढ़ रहा है। अपनी पसन्दीदा पुस्तकों को लोग अब 'आई पैड' पर ई बुक के रूप में पढ़ने लगे हैं। यह उपकरण कुछ ही वर्षो पहले बाजार में आया था और अब साहित्य एवं ज्ञान के विस्तार में क्रांति ला रहा है। जो सुविधाएँ पहले बड़े-बड़े संघटकों में भी नहीं होती थी वे अब लैपटॉप और चल फोन पर उपलब्ध होने लगी हैं।

हिंदी शिक्षण-प्रशिक्षण के क्षेत्र में इनका प्रयोग आरम्भ हो गया है, जिसका अधिक से अधिक विस्तार होना चाहिए। चल टेलीफोन के माध्यम से से सारी सामग्री सुदूर गाँवों में भी भेजी जा रही हैं। इस कारण शहर और ग्रामीण क्षेत्रों के बीच ज्ञान की दूरियाँ कम होंगी और विकास तेजी से हो सकेगा। ये सुविधाएँ पाठ्यक्रमों के मानकीकरण में भी सहायक सिद्ध होंगी।

मल्टीमीडिया के माध्यम से बच्चों को बहुत कुछ, खेल-खेल में ही, सिखाया और पढ़ाया जा रहा है। गौरवशाली भारत एक ऐसी ही सी.डी. है जिसमें मल्टीमीडिया का प्रयोग कर बड़े ही रोचक ढंग से भाषा-संस्कृति को प्रस्तुत किया गया है। यह अंग्रेजी-हिंदी में है और इसमें एक विषय से दूसरे में आसानी से विचरण किया जा सकता है। यहाँ तक कि इनका उपयोग विकलांगों के शिक्षण-प्रशिक्षण के क्षेत्र में भी होने लगा है, जिससे एक नए संसार का ही विकास हो रहा है।

अभी हाल में ही (18 से 20 नवम्बर 2011) विकीपीडिया द्वारा आयोजित एक सम्मेलन में भाग लेने का सुअवसर मुझे भी प्राप्त हुआ था। मुम्बई में आयोजित इस कार्यक्रम में कई नेत्रहीन प्रतिभागियों ने भी भाग लिया था। इन सबने यह बताया कि किस प्रकार प्रौद्योगिकी का समुचित प्रयोग कर वे अपनी सीमित सीमाओं का विस्तार कर विश्व समाज तक अपने विचार पहुँचा रहे थे। इन तथाकथित अक्षम लोगों की प्रविष्टियाँ किसी भी मायने में सक्षम लोगों की प्रविष्टियों से गुणवत्ता और सारगर्भिता के मापदंडों पर कमतर नहीं थीं। ऐसे लोगों के लिए पुरानी शिक्षण प्रणालियों को बदलकर समसामयिक बनाना होगा। अतः हिंदी शिक्षण-प्रशिक्षण के क्षेत्र में नए-नए प्रयोगों द्वारा सूचना प्रौद्योगिकी का उपयोग कर हिंदी को विश्व भाषा के रूप में प्रस्तुत किया जा सकता है। किंतु सबसे पहले भारत में ही हिंदी की स्थिति को सुधारना होगा।

मानकीकरण की दिशा में प्रथमा-मध्यमा के स्तर पर कोई नियोजित प्रयास नहीं हुआ है। मेरे विचार से यह अब समय की आवश्यकता हो गई है। अगर ऐसा नहीं किया गया तो उच्चस्तर की शिक्षा पर इसका असर पड़ेगा। यह बात सच है कि उत्तमा स्तर के पाठ्यक्रमों को मानक बनाने के प्रयास हो रहे हैं किंतु विभिन्न प्रकार के वैविध्य के कारण यहाँ भी परेशानियाँ हैं। प्रशिक्षण की ओर अगर यथोचित ध्यान दिया जाय तो सुविधा हो सकती है।

यह नितांत आवश्यक है कि प्रथमा एवं मध्यमा के स्तर पर हिंदी शिक्षण कार्यक्रमों को सुनियोजित किया जाय। इक्कीसवीं सदी में इनको देश-काल एवं परिवेश के अनुकूल बना कर स्थानीय भाषा के माध्यम से हिंदी पढ़ाने वालों को तैयार करते हुए, सही उच्चारण के लिए भाषायी प्रयोगशाला या वीडियो सी.डी. के साथ हिंदी भाषी शिक्षकों को भी साथ होना चाहिए। हिंदी शिक्षण-प्रशिक्षण को विश्वव्यापी बनाने के लिए और इसको अपने मंतव्य एवं गंतव्य तक पहुंचाने के लिए आवश्यक कुछ बिन्दुओं पर चर्चा इस आलेख में की गई है। यह आशा की जाती है कि यह विश्व हिंदी शिक्षण-प्रशिक्षण को और अधिक सुगढ बनाने में सहायक होगा।

## संदर्भः

1. नौटियाल, जे.पी., 'भाषा शोध अध्ययन 2005 में हिंदी पहले स्थान पर', प्रवासी संसार, अंक 3, पृष्ठ 26-30, सितम्बर 2006।

2. जगन्नाथन, वी.आर., 'विदेशी भाषा के रूप में हिंदी शिक्षण : मानकीकरण का सवाल', गगनांचल, वर्ष 27, अंक 4, अक्टूबर-दिसम्बर 2004, विदेशों में हिंदी उत्तरार्ध, पृष्ठ 24-37।

3. पालीवाल, कृष्णदत्त, 'जापानी विश्वविद्यालय में हिंदी शिक्षण', सातवाँ विश्व हिंदी सम्मेलन स्मारिका, भारतीय सांस्कृतिक सम्बंध परिषद, पृ:ठ 261-264, जून 2003, सूरिनाम।

4. राजेश के. जैन, 'हिंदी और शिक्षा व्यवस्था', सातवाँ विश्व हिंदी सम्मेलन स्मारिका, भारतीय सांस्कृतिक सम्बंध परिषद, पृष्ठ 157-159, जून 2003, सूरिनाम।

5. गौरवशाली भारत, आर्यान ई-साफ्ट प्राइवेट लिमिटेड, एफ-8, शंकर मार्केट, कनाट प्लेस, नई दिल्ली-1, भारत।

# उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान, लखनऊ

## साहित्य सम्बन्धी महत्वपूर्ण प्रकाशन

| पुस्तक का नाम | लेखक का नाम | मूल्य |
|---|---|---|
| डा0 राजेन्द्र प्रसाद : एक युग स्मरण | सम्पा0 वाल्मीकि चौधरी | 200.00 |
| महाकवि अमीर खुसरो | अनु0 अब्दुल सत्तार | 35.00 |
| भुवनेश्वरः व्यक्तित्व एवं कृतित्व | सम्पा0 राजकुमार शर्मा | 90.00 |
| सुब्रह्मण्य भारती | सम्पा0 डा0 एन0 सुन्दरम | 165.00 |
| साहित्य मनीषी आचार्य रामचन्द्र शुक्ल | डा0 रामचन्द्र तिवारी | 60.00 |
| भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र की जीवन चरित्र | राधा कृष्ण दास | 48.00 |
| हरिश्चन्द्र | बाबू शिवनन्दन सहाय | 100.00 |
| राष्ट्रकवि मैश्थलीषरण गुप्त स्मृति ग्रंथ | सम्पा0 स्व0 डा0 ठाकुर प्रसाद सिंह | 175.00 |
| राजर्षि पुरुषोत्तमदास टण्डन स्मृति ग्रंथ | सम्पा स्व0 श्री कमलापति मिश्र | 125.00 |
| आचार्य किशोरीदास वाजपेई स्मृति ग्रंथ | सम्पा0 डा0 मंजु लता तिवारी | 200.00 |
| गया प्रसाद शुक्ल 'सनेही' स्मृति ग्रंथ | सम्पा0 डॉ0 लक्ष्मीशंकर मिश्र 'निशंक' | 165.00 |
| बंशीधर शुक्ल रचनावली | सम्पा0 डॉ0 श्यामसुन्दर मधुप | 378.00 |
| कबीर | डॉ0 विश्वनाथ प्रसाद तिवारी | 40.00 |
| गोस्वामी तुलसीदास | डॉ0 रामचन्द्र तिवारी | 50.00 |
| रामचंद्र शुक्ल | प्रो0 सत्यदेव मिश्र | 15.00 |
| राष्ट्रकवि सोहन लाल द्विवेदी | डॉ0 राष्ट्रबन्धु | 40.00 |
| चंदवरदाई | डॉ0 सुमन राजे | 50.00 |
| कविवर सुमित्रानन्दन पंत | डॉ0 सुरेश चन्द्र गुप्त | 52.00 |
| कथाकार यशपाल | डॉ0 मनमोहन सहगल | 70.00 |
| सुभद्रा कुमारी चौहान | डॉ0 प्रतीक मिश्र | 55.00 |
| भगवतीचरण वर्मा : एक व्यक्तित्व–चित्र | ज्ञान चन्द्र जैन | 70.00 |
| अयोध्या सिंह उपाध्याय 'हरिऔध' | डॉ0 कन्हैया सिंह | 43.00 |
| मैथिलीशरण गुप्त | डॉ0 प्रभाकर शुक्ल | 50.00 |


**सम्पर्क सूत्र**

**निदेशक**

**उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान**

**राजर्षि पुरुषोत्तमदास टण्डन हिन्दी भवन**

6, महात्मा गांधी मार्ग, हजरतगंज, लखनऊ–226001

दूरभाष : 0522-2614470



ISBN : 978-93-82175-53-7

मूल्य रु. 125=00